अन्तर्जात बल

भू-दृश्यों का विकास

पृथ्वी की सतह पर दो प्रकार के बल कार्य करते हैं:- अन्तर्जात और बहिर्जात। अन्तर्जात बल (पटलविरूपणी बल, ज्वालामुखी क्रिया, भूकम्प आदि) भूतल पर विषमताओं का सृजन करते हैं। बहिर्जात बल (बहता जल, सागरीय तरंग, हिमानी, भूमिगत जल, पवन आदि) समतल स्थापक बल होते हैं। पृथ्वी पर स्थित ऊँची भूमि (पर्वत, पठार, मैदान आदि) तथा धँसी हुई भूमि (झील, गर्त आदि) में एक भौतिक संतुलन की दशा होती है जो समस्थिति (Isostasy) कहलाती है। ये सभी एक प्राकृतिक नियम के अनुरूप संतुलित हैं। सर्वप्रथम एयरी व प्राट महोदय ने इस नियम की व्याख्या की थी।

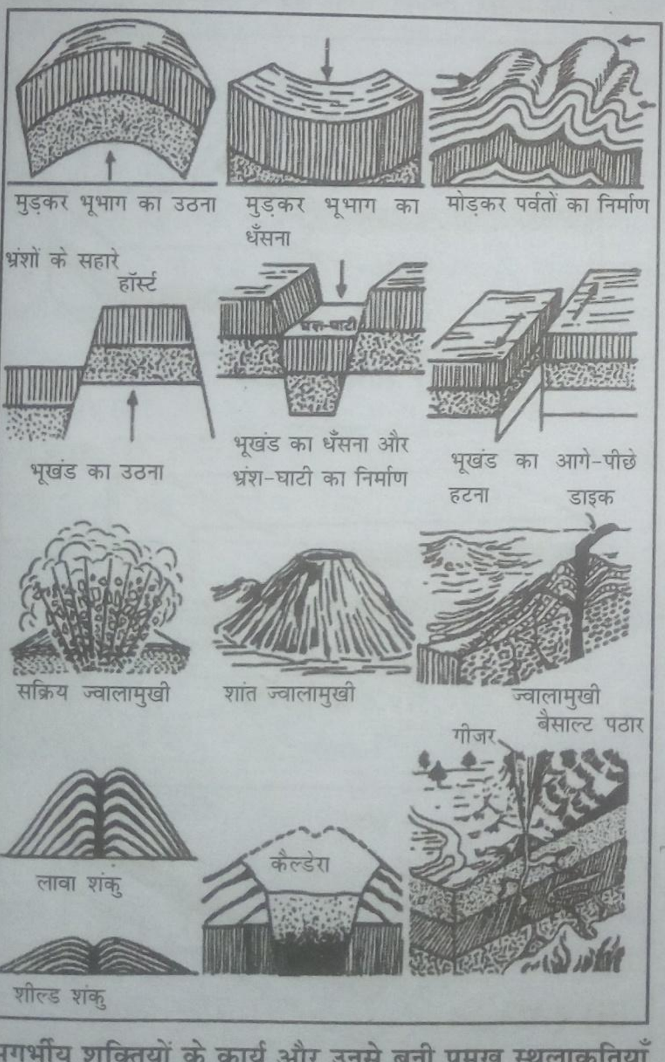

भूगर्भीय शक्तियों के कार्य और उनसे बनी प्रमुख स्थलाकृतियाँ

अंतर्जात बलों को कार्य की तीव्रता के आधार पर दीर्घकालिक व आकस्मिक दो प्रकारों में बांटा गया है। दीर्घकालिक संचलन को पटलविरूपणी बल (Diastrophic Forces) भी कहा जाता है। इसके अंतर्गत लंबवत (Vertical) तथा क्षैतिज (Horizontal) संचलन आते हैं। इन्हें क्रमशः महाद्वीप निर्माणकारी (Epeirogenic Movement) तथा पर्वत निर्माणकारी (Orogenic Movement) कहा जाता है। लंबवत संचलन भी दो प्रकार के हो सकते हैं–उपरिमुखी (Upward) व अधोमुखी (Downward)। उत्थित पुलिन, उत्थित स्थलखंड (भारत में कच्छ की खाड़ी के निकट लगभग 24 किमी. लंबी भूमि कई किलोमीटर ऊपर उठ गई है, जिसे अल्लाह का बांध कहते हैं) आदि उपरिमुखी संचलन के एवं इंग्लैंड व स्कॉटलैंड में समुद्र तल से सैकड़ों मीटर नीचे कोयले की खुदाई, मुम्बई के प्रिंस डॉक क्षेत्र के जलमग्न वन आदि अधोमुखी संचलन के उदाहरण हैं।

क्षैतिज संचलन में दो प्रकार के बल कार्य करते हैं–संपीडन बल (Forces of compression) व तनाव बल (Forces of tension)। संपीडन बल से चट्टानों की परतें मुड़ जाती हैं। ऊपर उठे भाग को अपनति (Anticline) और धँसे हुए भाग को अभिनति (Syncline) कहते हैं। संपीड़न बल की भिन्नता के कारण वलन (Folding) के प्रकारों में भी अंतर मिलता है।

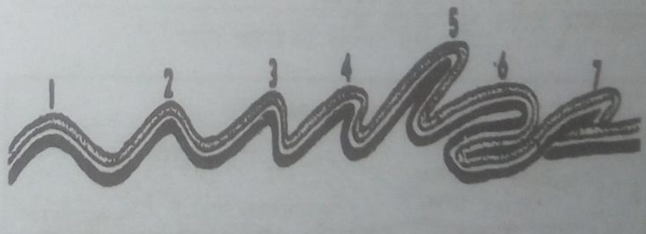

विभिन्न प्रकार के वलन

1. सम्मिलित वलन (Symmetrical fold)
   उदा.- स्विट्जरलैंड का जूरा पर्वत
2. असममित वलन (Asymmetrical fold)
   उदा.- ब्रिटेन का दक्षिण पेनाइन पर्वत
3. एकनतिवलन (Monoclinal fold)
   उदा. -आस्ट्रेलिया का ग्रेट डिवाइडिंग रेंज

4. अधिवलन (Over fold)
   उदा.- भारत की पीरपंजाल श्रेणी
5. समनत वलन (Isoclinal fold)
   उदा. -पाकिस्तान का कालाचित्ता पर्वत
6. परिवलन (Recumbent fold)
   उदा.- ब्रिटेन का कैरिक कैसल पर्वत
7. अधिक्षिप्त वलन (Overthrust fold)
   उदा. -कश्मीर की पीरपंजाल श्रृंखला व गढ़वाल हिमालय

ग्रीवाखंड पर कश्मीर की स्थिति

जब परिवलित मोड़ की एक भुजा टूटकर बहुत दूर अलग जा गिरती है और अन्य प्रकार की चट्टानों पर चढ़ जाती है तो उसे ग्रीवाखंड (नैपे) कहते हैं। कश्मीर घाटी एक ग्रीवाखंड पर ही अवस्थित है।

पंखाकार वलन (Fan Fold): विभिन्न स्थानों पर संपीडन की भिन्नता के कारण कभी-कभी एक वृहत अपनति में कई छोटी-छोटी अपनतियाँ व अभिनतियाँ मिलती है। ऐसी आकृति को समपनति (Anticlinorium) कहते हैं। इसी तरह जब असामान्य संपीडन के कारण एक वृहत् अभिनति के अंतर्गत कई छोटी-छोटी अपनतियाँ व अभिनतियाँ बन जाती है तो उस वृहत् अभिनति को समभिनति (synclinorium) कहा जाता है। इन दोनों स्थलाकृतियों को पंखाकार वलन भी कहते है।

छोटा नागपुर का सिंहभूम समपनति जो अब कट-छंट गया है।

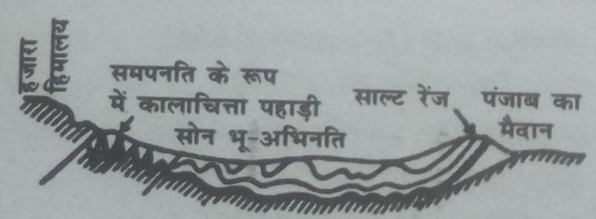

पाकिस्तान स्थित पोटवार समपिनति

भ्रंशन (Fault): इसके अंतर्गत दरारें (Cracks) विभंग (Fracture) व भ्रंशन (Faulting) को शामिल किया जाता है। भ्रंशन की उत्पत्ति क्षैतिज संचलन के दोनों बलों (संपीडन व तनाव बल) से होती है परन्तु तनाव बल का स्थान अधिक महत्वपूर्ण हैं। अधिकतर भ्रंश इसी के कारण उत्पन्न हुए हैं। सामान्य भ्रंश का निर्माण तनाव बल के कारण होता है। इसमें दरार के दोनों ओर के भूखंड एक दूसरे के विपरीत दिशा में खिसकते हैं एवं एक खंड नीचे की ओर गिर जाता है। सामान्य भ्रंश से भू-पटल में प्रसार होता है। उत्क्रम भ्रंश संपीडन के कारण निर्मित होते हैं। इस भ्रंश में दबाव के कारण दरार के दोनों ओर के भू-खंड एक दूसरे की ओर खिसकते हैं एवं एक दूसरे के ऊपर आरूढ़ हो जाते हैं। इसमें सतह का फैलाव पहले की तुलना में घट जाता है। इसे आरूढ़ भ्रंश (Thrust Fault) भी कहा जाता है। उपर्युक्त दोनों भ्रंशों के द्वारा कगारों (Escarpments) का निर्माण होता है जिसके सहारे लटकती घाटी एवं जलप्रपातों का भी विकास होता है। उदाहरण के लिए पश्चिमी घाट कगार, विंध्यन कगार क्षेत्र में ऐसा देखा जा सकता है।

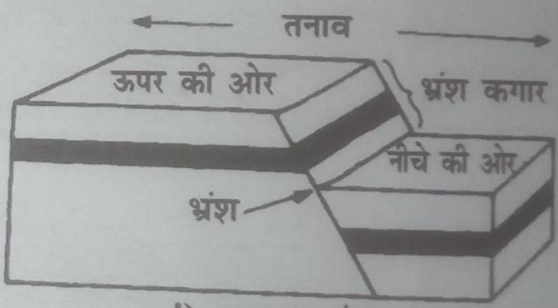

i) सामान्य भ्रंश

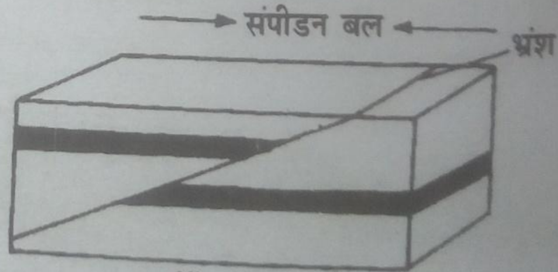

ii) उत्क्रम भ्रंश

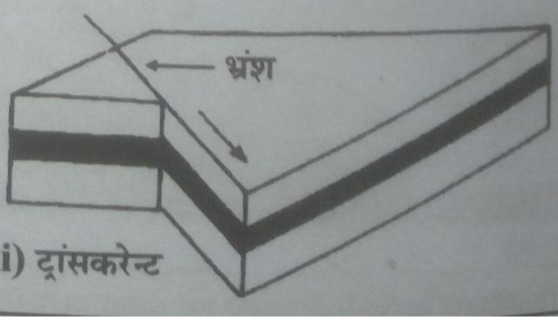

iii) ट्रांसकरेन्ट

जब किसी क्षेत्र में एक-दूसरे के समानांतर अनेक भ्रंश होते हैं एवं सभी भ्रंश तलों की ढाल एक ही दिशा में होती है, तो इसे सोपानी भ्रंश कहा जाता है। यूरोप की राइन घाटी सोपानी भ्रंशों पर ही स्थित है। जब स्थल पर दो विपरीत दिशाओं से दबाव पड़ता है तो दोनों ओर के भू-खंड भ्रंश तल के सहारे धंसने या ऊपर उठने के स्थान पर आगे-पीछे खिसके हुए होते हैं। इस प्रकार के भ्रंश को ट्रांसकरेन्ट भ्रंश (Transcurrent or Strike-slip fault) कहा जाता है। कैलिफोर्निया के सान एंड्रियास भ्रंश का निर्माण इसी प्रकार हुआ है। हिमालय के गढ़वाल व उत्तरकाशी क्षेत्र में भी ऐसे भ्रंश देखने को मिलते हैं। भ्रंशों के निर्माण के कारण कई स्थलाकृतियाँ निर्मित होती है। जैसे -भ्रंश कगार, भ्रंश घाटी, रैम्प घाटी, भ्रंशोत्थ पर्वत व हार्स्ट पर्वत।

भ्रंश घाटी (Rift Valley) का विकास तब होता है। जब दो भ्रंश रेखाओं के बीच का चट्टानी स्तंभ नीचे की ओर धंस जाता है। जब तनाव जनित बल के कारण दो भू-खंडों का विपरीत दिशा में खिसकाव होता है तब इनका निर्माण होता है। भ्रंश घाटियाँ लम्बी, संकरी व गहरी होती है। इन्हें जर्मन भाषा में ग्राबेन (Graben) कहा जाता है। जॉर्डन की प्रसिद्ध भ्रंश घाटी में ही मृत सागर स्थित है जो समुद्र तल से भी अधिक नीचा है। अफ्रीका में न्यासा, रूडोल्फ, टांगानिका, अल्बर्ट व एडवर्ड झीलें भू-भ्रंश घाटी में ही स्थित हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में कैलिफोर्निया क्षेत्र में स्थित मृत घाटी (Death Valley) भी भू-भ्रंश घाटी है। यह समुद्र तल से भी नीची हैं। स्कॉटलैंड की मध्यवर्ती घाटी, दक्षिण आस्ट्रेलिया की स्पेन्सर खाड़ी, भारत की नर्मदा, ताप्ती एवं ऊपरी दामोदर नदी घाटियाँ भी भ्रंश घाटियों के प्रमुख उदाहरण हैं।

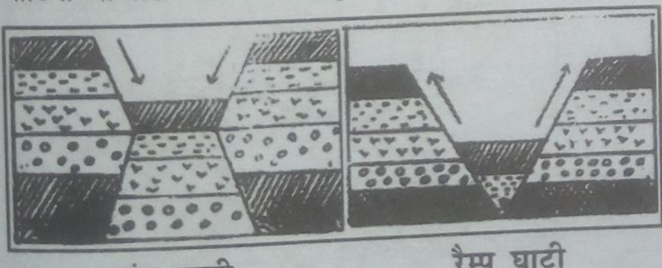

भ्रंश घाटी — रैम्प घाटी

रैम्प घाटी (Ramp Valley) का निर्माण उस स्थिति में होता है जबकि दो भ्रंश रेखाओं के बीच का स्तंभ यथास्थिति में ही रहे परंतु संपीडनात्मक बल के कारण किनारे के दोनों स्तंभ ऊपर उठ जाएं। असम की ब्रह्मपुत्र घाटी रैम्प घाटी का प्रमुख उदाहरण है।

जब दो भ्रंशों के बीच का स्तंभ यथावत रहे एवं किनारे के स्तंभ नीचे धंस जाए तो **ब्लॉक पर्वत** (Block Mountain) का निर्माण होता है। भारत का सतपुड़ा पर्वत, जर्मनी का ब्लैक फॉरेस्ट व वास्जेज पर्वत, संयुक्त राज्य अमेरिका का वासाच रेंज व सियरा नेवादा तथा पाकिस्तान का साल्ट रेंज ब्लॉक पर्वतों के प्रमुख उदाहरण हैं। सियरा नेवादा विश्व का सबसे विस्तृत ब्लॉक पर्वत है।

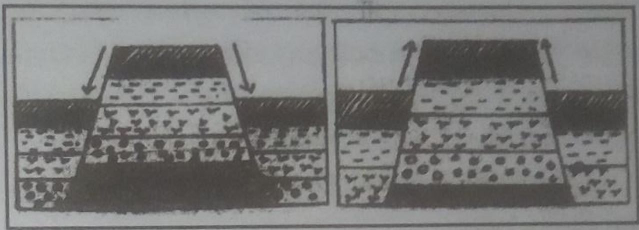

ब्लॉक पर्वत — हॉर्ज पर्वत

जब दो भ्रंशों के किनारों के स्तंभ यथावत रहे एवं बीच का स्तंभ ऊपर उठ जाए तो **हॉर्स्ट पर्वत** (Horst Mountain) का निर्माण होता है। जर्मनी का हॉर्ज पर्वत इस प्रकार के पर्वत का प्रमुख उदाहरण है। वस्तुतः भ्रंश घाटी व रैम्प घाटी एवं ब्लॉक पर्वत व हॉर्स्ट पर्वत प्रायः एक से प्रतीत होते हैं। परंतु ये भूसंचलन की दृष्टि से अलग-अलग परिस्थितियों के परिणाम हैं।

भ्रंश घाटी में स्थित मृत सागर

सोपानी भ्रंशों की राइन घाटी

बहिर्जात बल

बहिर्जात बल का भूपटल पर प्रमुख कार्य अनाच्छादन (Denudation) होता है। इसके अन्तर्गत अपक्षय तथा अपरदन की सम्मिलित क्रिया होती है। अपक्षय में स्थैतिक क्रिया होती है जबकि अपरदन में गतिशील क्रिया होती है। भौतिक अपक्षय को विघटन एवं रासायनिक अपक्षय को वियोजन कहते हैं। उष्ण कटिबंधीय आर्द्र भागों में रासायनिक अपक्षय होता है जबकि उष्ण व शुष्क मरूस्थलीय भागों में भौतिक अपक्षय होता है। वे सभी क्रियाएँ जो धरातल को सामान्य तल पर लाने का प्रयास करती हैं, उन्हें 'प्रवणता संतुलन की प्रक्रियाएँ' कहते हैं। बाह्य कारकों द्वारा स्थलीय धरातल के अपरदन को निम्नीकरण (Degradation) कहते हैं। धरातल के नीची जगहों को भरकर ऊँचा करना अधिवृद्धि (Aggradation) कहलाता है।

अपक्षय एवं अपरदन

अपक्षय (Weathering):- चट्टानों के अपने ही स्थान पर कमजोर होने, टूटने, सड़ने तथा विखंडित होने को 'अपक्षय' कहते हैं। जैसे ही चट्टान धरातल पर अनावृत होकर मौसमी प्रभावों से प्रभावित होते हैं, यह प्रक्रिया शुरू हो जाती है। कारकों के आधार पर अपक्षय को तीन प्रकार में बांटा जाता है:-

(क) भौतिक या यांत्रिक अपक्षय (Physical or Mechanical Weathering)

(i) ताप के कारण छोटे-बड़े टुकड़ों में विघटन
(ii) तुषार-चीरण अर्थात चट्टानों में जल-प्रवेश
(iii) घर्षण
(iv) दबाव

(ख) रासायनिक अपक्षय (Chemical Weathering)

(i) आक्सीकरण (Oxidation)
(ii) कार्बोनेटीकरण (Carbonation)
(iii) जलयोजन (Hydration)

(ग) प्राणिवर्गीय अपक्षय (Biological Weathering)

(i) वानस्पतिक (Plants) अपक्षय
(ii) जैविक (Animal) अपक्षय
(iii) मानवीय क्रियाएँ (Human activities)

अपरदन (Erosion) :- अपक्षयित पदार्थों का अन्यत्र स्थानान्तरण ही 'अपरदन' कहलाता है। अपरदन में भाग लेनेवाली प्रमुख प्रक्रियाएँ इस प्रकार हैं:-

(1) **अपघर्षण (Abrasion) :** जब कोई प्रक्रम अपने साथ पत्थर, कंकड़, बालू आदि पदार्थों को लेकर आगे बढ़ती है तो इन पदार्थों के सम्पर्क में आनेवाली चट्टानों के क्षरण को अपघर्षण कहते हैं।

(2) **सन्निघर्षण (Attrition) :** किसी प्रक्रम के साथ बहनेवाले पदार्थों के आपस में टकराकर छोटा होने की प्रक्रिया को सन्निघर्षण कहते हैं।

(3) **घोलन या संक्षारण (Corosion) :** घुलनशील चट्टानें यथा-डोलोमाइट, चूना पत्थर आदि का जलक्रिया द्वारा घुलकर शैल से अलग होना संक्षारण कहलाता है। यह भूमिगत जल तथा बहते जल द्वारा होता है। इससे कार्स्ट स्थलाकृतियों का निर्माण होता है।

(4) **जलगति क्रिया (Hydraulic action):** जब जल की तीव्र गति के कारण चट्टान टूट-फूटकर अलग हो जाते हैं तो उसे जलगति क्रिया कहते हैं। यह सागरीय तरंगो, एवं नदी द्वारा होता है।

(5) **जलदाब क्रिया (Water Pressure):** जब किसी चट्टान में जल के दबाव के कारण अपरदन की क्रिया होती है तो उसे जलदाब क्रिया कहा जाता है। यह मुख्यत: सागरीय तरंगों द्वारा होता है।

(6) **उत्पाटन (Plucking):** यह हिमानियों द्वारा होता है। यह अपने प्रवाह-मार्ग की चट्टानों को तोड़ते हुए आगे बढ़ती है। इस प्रक्रिया को ही उत्पाटन कहा जाता है।

(7) **अपवहन (deflation):** यह पवन के द्वारा शुष्क या अर्द्धशुष्क प्रदेशों में अवसादों के उड़ाव क्रिया है।

अपरदन चक्र

अपरदन चक्र बहिर्जात व अंतर्जात बलों का सम्मिलित परिणाम होता है। अंतर्जात बल (पटल विरुपणी बल, ज्वालामुखी क्रिया, भूकम्प आदि) धरातल पर विषमताओं का सृजन करते हैं। धरातलीय उत्थान द्वारा पर्वत, पठार, पहाड़ियाँ एवं धरातलीय अवतलन द्वारा झील, खाइयाँ, गर्त आदि का निर्माण होता है। जैसे ही धरातल में उत्थान द्वारा विषमताओं का सृजन होता है, बहिर्जात बल समतल स्थापक बल के रूप में कार्य करना प्रारंभ कर देते हैं एवं इनसे विशिष्ट स्थलाकृतियों का निर्माण होता है। सर्वप्रथम स्कॉटिश भूगर्भशास्त्री **जेम्स हटन** ने भू-आकृतियों के संदर्भ में

'एकरूपतावाद' की अवधारणा दी एवं बताया कि 'वर्तमान भूत की कुंजी है'। उन्होने कहा कि 'न आदि का पता है और न अंत का भविष्य'। उनकी एकरूपतावादी संकल्पना को उनके शिष्यों जॉन प्लेफेयर व सर चार्ल्स ल्येल ने आगे बढ़ाया। स.रा. अमेरिकी भूगोलवेत्ता विलियम मोरिस **डेविस** के अनुसार किसी भी स्थलाकृति के निर्माण व विकास का एक ऐतिहासिक क्रम होता है जिसके अंतर्गत उसे तरुण (Young), प्रौढ़ (Mature) एवं जीर्ण (Old) अवस्थाओं से होकर गुजरना पड़ता है। उनकी इस विचारधारा पर डार्विन के 'जैविक विकासवादी अवधारणा' का प्रभाव है। डेविस ने बताया कि स्थलाकृतियाँ चट्टानों की **संरचना**, अपरदन के **प्रक्रमों** व समय की अवधि या विभिन्न **अवस्थाओं** का परिणाम होती हैं। इसे डेविस का त्रिकट (Trio of Davis) भी कहा जाता है। डेविस के अनुसार अपरदन चक्र समय की वह अवधि है, जिसमें एक उत्थित भूखंड अपरदन की विभिन्न अवस्थाओं से गुजरते हुए अंततः एक समप्राय मैदान (Peneplain) में बदल जाता है, तथा इसमें कहीं-कहीं थोड़े उठे हुए भाग मोनाडनॉक के रूप में शेष बचे रहते हैं। जर्मनी के वाल्टर पेंक ने अपने भू-आकृतिक चक्र डेविस के त्वरित व अल्पावधि उत्थान की अवधारणा की आलोचना की है एवं उनकी अवस्था संकल्पना की आलोचना करते हुए, उन्होंने बताया है कि स्थलाकृतियाँ उत्थान तथा निम्नीकरण की दर तथा दोनों की प्रावस्थाओं के परस्पर संबंधों का प्रतिफल होती है। उन्होंने उठते हुए स्थल खंड का नाम प्राइमारम्प रखा एवं अपरदन के प्रक्रम से गुजरने के बाद स्थलाकृति का अंतिम परिणाम समप्राय मैदान के बदले इंड्रम्प को बताया। एल.सी. किंग ने अर्द्धशुष्क प्रदशो के लिए पेडीप्लेनेशन चक्र की संकल्पना दी है।

धरातल पर परिवर्तन लाने वाले बहिर्जात बल एवं उत्पन्न स्थलरूप

गतिशील शक्तियाँ	क्रियाएं	उत्पन्न स्थलरूप	
		अपरदनात्मक	निक्षेपात्मक स्थलरूप
1. बहता हुआ जल या नदी (River)	अपघर्षण, घोलन, सन्निघर्षण, जलगति क्रिया	'V' आकार की घाटी, 'I' आकार की घाटी (गार्ज एवं कैनयन), जलप्रपात एवं क्षिप्रिका, नदी विसर्प या मियांडर, संरचनात्मक सोपान, नदी वेदिका, समप्राय मैदान (पेनीप्लेन)	जलोढ़ पंख, जलोढ़ शंकु, प्राकृतिक तटबंध, बाढ़ का मैदान, डेल्टा
2. हिमानी या हिमनद (Glacier)	अपघर्षण, उत्पाटन	'U' आकार की घाटी, लटकती या निलंबित घाटी, सर्क या हिमगह्वर, सर्क झील या टार्न, एरेट या तीक्ष्ण कटक, हार्न या गिरिश्रृंग, नुनाटक, श्रृंग व पुच्छ, भेड़पीठ शैल या रॉशमुटोने, हिमसोपान, फियोर्ड	हिमोढ़ या मोरेन, ड्रमलिन, एस्कर केम, केम वेदिका, केटिल एवं हम्मक, हिमजल अवक्षेप मैदान
3. पवन (Wind)	अपवाहन, अपघर्षण, सन्निघर्षण	अपवाह बेसिन या वात गर्त, इंसेलबर्ग, छत्रक शिला या मशरूम रॉक, भूस्तम्भ या डिमॉइसल, ज्यूगेन, यारडांग, ड्राइकांटर, जालीदार शिला, पवन पुल,	बालुका स्तूप, बरखान, नेबखा, लूनेट, तारा स्तूप, ह्वेलबैक स्तूप, रेतमुक्त कारीडोर या गासी, लोयस, बजादा, प्लाया
4. सागरीय जल (Sea Water)	जलगति क्रिया, अपघर्षण क्रिया, सन्निघर्षण क्रिया घुलन क्रिया, जलदाब क्रिया	तटीय क्लिफ, खाँच या दांत, तटीय कन्दरा, प्राकृतिक चिमनी या वात छिद्र, निवेशिका या ज्याँ, प्राकृतिक मेहराब, चिमनी शैल, लघुनिवेशिका, तरंग, घर्षितवेदी, स्टैक	पुलीन या बीच, कस्पपुलीन, रोधिका, अपतट रोधिका, तटीय रोधिका, स्पिट या भूजिह्वा, लूप रोधिका, संयोजक रोधिका, छल्लेदार रोधिका, टोम्बोलो, रोधिका द्वीप
5. भूमिगत जल (Ground Water)	घुलनक्रिया, जलगति क्रिया, अपघर्षण, सन्निघर्षण	घोल रंध्र, विलयन रंध्र, डोलाइन, पोल्जे, युवाला, लैपीज, कंदराएं, प्राकृतिक पुल, धँसती निवेशिका, अंधी घाटी, कार्स्ट या घोल घाटी	स्टैलेक्टाइट, स्टैलेग्माइट, कंदरा स्तम्भ, ड्रिप स्टोन, स्पेलियोथेम, ग्लोबुलाइट, हैलेक्टाइट, हैलेग्माइट

अपरदन के प्रक्रम

इसके अंतर्गत बहता जल (नदी), भूमिगत जल, सागरीय तरंग, हिमानी, परिहिमानी, पवन आते है। अपरदन के प्रक्रम दो प्रकार की स्थलाकृतियों का निर्माण करते हैं:

(1) अपरदन से (2) निक्षेपण से।

नदी (बहता जल)

कोई नदी अपनी सहायक नदियों समेत जिस क्षेत्र का जल लेकर आगे बढ़ती है, वह स्थान प्रवाह क्षेत्र या नदी-द्रोणी (River Basin) या जलग्रहण क्षेत्र (Catchment Area) कहलाती है। एक नदी-द्रोणी दूसरी नदी द्रोणी से जिस उच्च भूमि द्वारा अलग होती है उसे जल विभाजक (Water Shed or Divide) कहते हैं। उदाहरण के लिए उत्तर में अरावली पर्वत श्रेणी और इसके उत्तर की उच्च भूमि सिन्धु व गंगा-द्रोणियों को अलग करने के कारण जलविभाजक का कार्य करती है। नदी द्वारा निर्मित स्थलरूप निम्न हैं-

(i) 'V' आकार की घाटी : नदी द्वारा अपनी घाटी में की गई ऊर्ध्वाकार काट के कारण घाटी पतली, गहरी और 'V' आकार की हो जाती है। इसमें दीवारों का ढाल तीव्र व उत्तल होता है। यद्यपि घाटियों में थोड़ा क्षैतिज अपरदन भी होता है परंतु घाटी को गहरा करने का कार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। आकार के अनुसार ये दो प्रकार के होते हैं- गॉर्ज तथा कैनियन। सामान्य रूप में बहुत गहरी तथा संकरी घाटी को **गॉर्ज** या कंदरा कहते हैं। कभी-कभी प्रपातों के द्रुत गति से पीछे हटने से भी गार्ज का निर्माण होता है। गॉर्ज के विस्तृत रूप को **कैनियन** या संकीर्ण नदी कंदरा कहते हैं। यह अपेक्षाकृत खड़ी ढाल वाली होती है। भारत में सिन्धु, सतलज तथा ब्रह्मपुत्र द्वारा क्रमश: निर्मित सिन्धु गार्ज, शिपकीला गॉर्ज तथा दिहांग गार्ज प्रसिद्ध है। विश्व में कैनियन का सबसे अच्छा उदाहरण सं. रा. अमेरिका में कोलोरेडो नदी पर स्थित ग्रैंड कैनियन है।

(ii) जलप्रपात (Waterfalls) व क्षिप्रिका (Rapids): जब नदियों का जल ऊँचाई से खड़े ढाल से अत्यधिक वेग से नीचे की ओर गिरता है तो उसे जलप्रपात कहते हैं। इसका निर्माण चट्टानी संरचना में विषमता के कारण असमान अपरदन, भूखंड में उत्थान, भ्रंश कगारों के निर्माण आदि के कारण होता है। उत्तर अमेरिका का नियाग्रा जलप्रपात और दक्षिणी अफ्रीका की जाम्बेजी नदी पर स्थित विक्टोरिया जलप्रपात इसके उदाहरण हैं। भारत में कर्नाटक राज्य में शरावती नदी पर स्थित जोग या गरसोप्पा जलप्रपात 260 मीटर की ऊँचाई से गिरता है। नर्मदा नदी का धुआंधार जलप्रपात (9 मीटर) तथा सुवर्णरेखा नदी का हुन्ड्रू जलप्रपात (97 मीटर) अपने प्राकृतिक भू-दृश्य के लिए प्रसिद्ध है। क्षिप्रिका की ऊँचाई जलप्रपात से कम होती है।

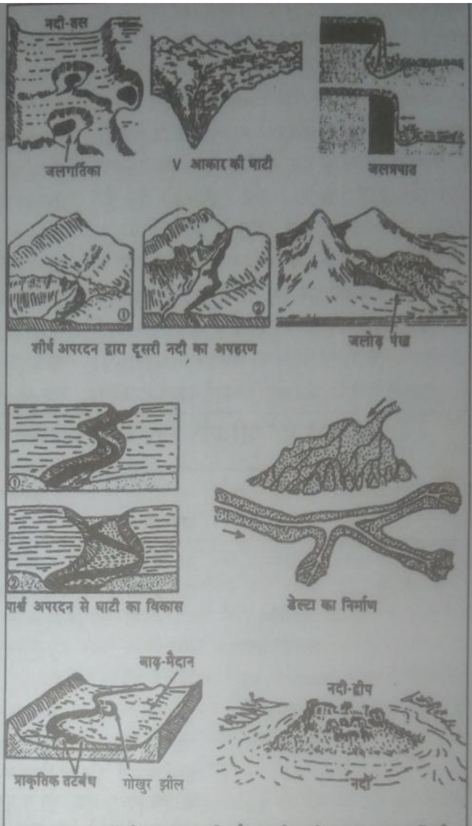

चित्र 4.4 : नदी के प्रमुख कार्य और उससे बनी प्रमुख स्थलाकृतियाँ

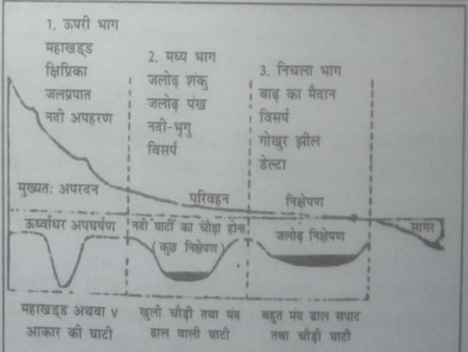

नदी घाटी के अनुप्रस्थ काट का पार्श्व चित्र

(iii) जलोढ़ शंकु (Alluvial Cone) : जब नदियाँ पर्वतीय भाग से निकलकर समतल प्रदेश में प्रवेश करती है तो चट्टानों के बड़े-बड़े अवसाद पीछे छूट जाते हैं तथा उनसे बनी आकृति जलोढ़ शंकु कहलाती है। विभिन्न जलोढ़ शंकुओं के मिलने से भाबर प्रदेश का निर्माण होता है।

(iv) जलोढ़ पंख (Alluvial Fans) : पर्वतीय भाग से निकलने के क्रम में नदियों के अवसाद दूर-दूर तक फैल जाते हैं। अत: इनसे पंखनुमा मैदान का निर्माण होता है जिसे जलोढ़ पंख कहते हैं। अनेक जलोढ़ पंखों के मिलने से गिरिपद मैदान या तराई प्रदेश का निर्माण होता है।

(v) नदी विसर्प (Meanders) : मैदानी क्षेत्रों में नदी की धारा दाएं-बाएं, बल खाती हुई प्रवाहित होती है और विसर्प बनाती है। ये विसर्प 'एस' (S) आकार की होती है। नदियों का ऐसा घूमना अधिक अवसादी बोझ के कारण होता है।

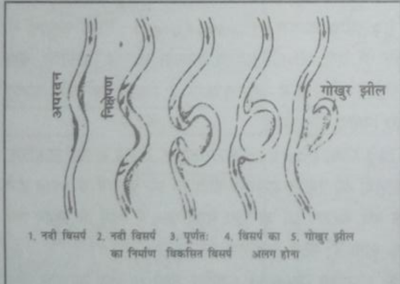

नदी-विसर्प तथा गोखुर झीलों का विकास

(vi) गोखुर झील (Oxbow lake) : जब नदी अपने विसर्प को त्यागकर सीधा रास्ता पकड़ लेती है तब नदी का अवशिष्ट भाग गोखुर झील या छाड़न झील कहलाता है।

(vii) तटबंध (Levees) : आगे बढ़ने के दौरान नदियाँ अपरदन के साथ-साथ बड़े-बड़े अवसादों का किनारों पर निक्षेपण भी करती जाती है, जिससे किनारे पर बांधनुमा आकृति का निर्माण हो जाता है। इसे प्राकृतिक तटबंध कहते हैं।

(viii) बाढ़ का मैदान (Flood Plain) : जब नदी की परिवहन शक्ति बहुत कम हो जाती है तो अत्यधिक अवसादों का निक्षेपण करने लगती है। फलस्वरूप अपने तल पर ही अवसादों का निक्षेपण करने के कारण उसकी धारा तक अवरुद्ध हो जाती है और उसका जल आसपास के मैदानों में फैल जाता है। इस समतल व चौरस मैदान को बाढ़ का मैदान कहा जाता है। इसमें प्रतिवर्ष बाढ़ के कारण नए अवसादों का जमाव होता रहता है।

(ix) डेल्टा (Delta) : निम्नवर्ती मैदानों में ढाल की न्यूनता व अवसादों की अधिकता के कारण नदी की परिवहन शक्ति कम होने लगती है एवं वह अवसादों का जमाव करने लगती है। इससे डेल्टानुमा (Δ) आकृति बनती है।

डेल्टा का निर्माण

डेल्टा को कई प्रकारों में बांटा जा सकता है ।

1. चापाकार डेल्टा (arcuate delta) : नील नदी तथा गंगा-ब्रह्मपुत्र का डेल्टा।
2. पंजाकार डेल्टा (Bird foot delta): मिसीसिपी-मिसौरी नदी का डेल्टा।
3. ज्वारनदमुखी डेल्टा (estuarine delta): भारत में नर्मदा व ताप्ती का डेल्टा।
4. दंताकार डेल्टा (cuspate delta) : एब्रो डेल्टा

भूमिगत जल (Under Ground Water)

धरातल के नीचे चट्टानों के छिद्रों तथा दरारों में स्थित जल को भूमिगत जल कहते हैं। इनसे बनी स्थलाकृतियों को **कार्स्ट स्थलाकृतियाँ** कहते हैं जो कि यूगोस्लाविया के एड्रियाटिक तट के चूना-पत्थर क्षेत्र की स्थलाकृतियों के नाम के आधार पर रखा गया है। भूमिगत जल का अपरदनात्मक व निक्षेपणात्मक कार्य

नदी, हिमानी, सागरीय लहरों अथवा पवन के कार्यों जितना तेज व महत्वपूर्ण नहीं होता। भूमिगत जल के प्रभाव के लिए कुछ जरूरी शर्तें निम्नलिखित हैं :

1. चूना-पत्थर या डोलोमाइट की चट्टानें
2. पर्याप्त स्थलाकृतिक उच्चावच
3. पर्याप्त वर्षा क्षेत्र
4. घुलनशील चट्टानों में संधियों का विकास।

भूमिगत जल द्वारा निर्मित स्थलरूप निम्न हैं-

(i) लैपीज (Lapies) : घुलनक्रिया के फलस्वरूप ऊपरी सतह अत्यधिक ऊबड़-खाबड़ तथा पतली शिखरिकाओं वाली हो जाती है। इस तरह की स्थलाकृति को क्लिंट या लैपीज कहते हैं।

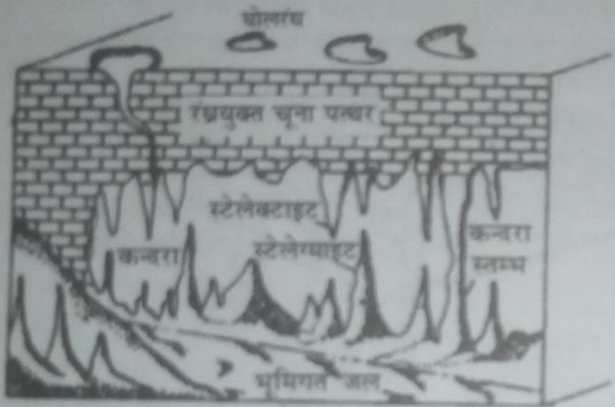

(ii) घोलरंध्र (Sink Holes) : जल की घुलन क्रिया के कारण सतह पर अनेक छोटे-छोटे छिद्रों का विकास हो जाता है, जिसे घोल रंध्र कहते हैं। गहरे घोल रंध्रों को विलयन रंध्र कहते हैं। विस्तृत आकार वाले घोलरंध्रों को डोलाइन कहते हैं जो कई घोलरंध्रों के मिलने से बनता है। जब कई डोलाइन मिलकर एक बड़ा आकार धारण कर लेते हैं तो उसे 'युवाला' की संज्ञा दी जाती है। पोलिए या पोल्जे युवाला से बड़ी स्थलाकृति है। विश्व में सबसे बड़ा पोल्जे बाल्कन क्षेत्र का 'लिवनो' पोल्जे है।

(iii) कन्दरा (Caverns) : भूमिगत जल के अपरदन द्वारा निर्मित स्थलाकृतियों में सबसे महत्वपूर्ण स्थलाकृति कन्दरा है। इनका निर्माण घुलन क्रिया तथा अपघर्षण द्वारा होता है। ये ऊपरी सतह के नीचे एक रिक्त स्थान होती है और इनके अन्दर निरन्तर जल का प्रवाह होता रहता है। कन्दराओं में जल के टपकने से कन्दरा की छत के सहारे चूने का जमाव लटकता रहता है जिसे स्टैलेक्टाइट कहते हैं। कन्दरा के फर्श पर चूने के जमाव से निर्मित स्तंभ स्टैलेग्माइट कहलाता है। इन दोनों के मिल जाने से कंदरा स्तंभ (Cave Pillers) का निर्माण होता है।

(iv) अंधी घाटी (Blind Valley) : कार्स्ट प्रदेशों में नदियों का जल विलयन रंध्रों से नीचे की ओर रिसने लगता है एवं नदियों की आगे की घाटी शुष्क रह जाती है, जिसे शुष्क घाटी कहते हैं जबकि घाटी के पिछले भाग को अंधी घाटी कहा जाता है।

सागरीय जल (Sea Water)

सागरीय जल का कार्य कई कारकों द्वारा संपन्न होता है। इनमें सागरीय लहर, धाराएँ, ज्वारीय तरंग तथा सुनामी शामिल हैं। इन सबमें सागरीय लहरों का कार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। सागरीय जल द्वारा निर्मित स्थलरूप निम्न हैं-

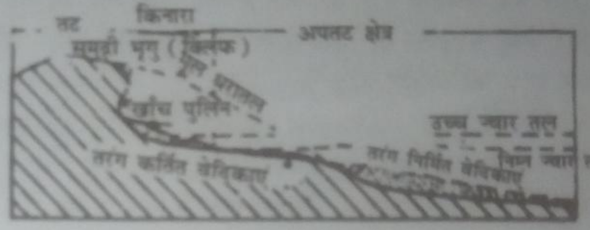

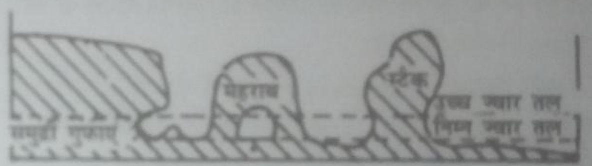

(i) तटीय कगार या भृगु (Coastal Cliffs) : जब समुद्र तट बिल्कुल खड़ा हो तो उसे क्लिफ या भृगु कहते हैं।

(ii) तटीय कन्दरा (Coastal Caves) : तटीय चट्टानों के बीच में जहाँ संधियाँ, भ्रंश व कमजोर चट्टान मिलते हैं, वहाँ सागरीय तरंगें तेजी से अपरदन करती है, जिससे वहाँ तटीय कन्दरा का निर्माण होता है।

(iii) स्टैक (Stack) : कन्दराओं के मिलने से बने प्राकृतिक मेहराबों की प्रकृति अस्थायी होती है। इस मेहराब के ध्वस्त होने के बाद चट्टान का जो भाग समुद्र जल में स्तंभ के समान शेष रह जाता है, स्टैक कहलाता है।

(iv) पुलीन (Beach) : तटीय भागों में भाटा जलस्तर और समुद्री तट रेखा के मध्य बालू, बजरी, गोलाश्म आदि पदार्थों के अस्थायी जमाव से बनी स्थलाकृति को पुलीन कहते हैं।

(v) रोधिका (Bars) : तरंगों तथा धाराओं द्वारा निक्षेप के कारण निर्मित कटक या बांध को रोधिका कहते हैं। जब रोधिकाओं का निर्माण तट से दूर एवं तट के प्राय: समानान्तर होती है तो उन्हें अपतट रोधिका कहते हैं। जब किसी द्वीप के चारों ओर अपरदित

पदार्थों के जमाव से रोधिका का निर्माण होता है तो वह लूप रोधिका कहलाती है।

(vi) संयोजक रोधिका (connecting Bars) : दो सुदूरवर्ती तटों अथवा किसी द्वीप को तटों से जोड़नेवाली रोधिका को संयोजक रोधिका कहते हैं। जब इसके दोनों छोर स्थल भाग से मिल जाते हैं तो उनके द्वारा घिरे हुए क्षेत्र में समुद्री खारे जल वाली लैगून झील (Lagoon Lake) का निर्माण हो जाता है। भारत में इसका उदाहरण उड़ीसा की चिल्का झील, आंध्र प्रदेश की पुलीकट झील तथा केरल की बेम्बानद झील है। तट से किसी द्वीप को मिलाने वाली रोधिका टोम्बोलो (Tombolo) कहलाती है।

(viii) तट रेखा (Coast Line) : समुद्र तट और समुद्री किनारे के मध्य की सीमा रेखा को तटरेखा कहते हैं। यह रेखा समुद्र की ओर समुद्र तट का निर्माण करती है। समुद्री तरंगों द्वारा तट रेखा में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। समुद्री तट पर अधिक अवरोधी चट्टानों से अंतरीप (cape) तथा कम अवरोधी चट्टानों से खाड़ियों (gulf and Bays) का निर्माण होता है। तट रेखाओं के निम्न मुख्य प्रकार हैं:

(a) फियर्ड तट : किसी हिमानीकृत उच्चभूमि के सागरीय जल के नीचे अंशत: धँस जाने से फियर्ड तट का निर्माण होता है। इनके किनारे, खड़ी दीवार के समान होते हैं। नार्वे का तट फियर्ड तट का सुन्दर उदाहरण है।

(b) रिया तट : नदियों द्वारा अपरदित उच्चभूमि के धँस जाने से रिया तट का निर्माण होता है। ये 'V' आकार की घाटी तथा ढलुए किनारे वाली होती है। इनकी गहराई समुद्र की ओर क्रमश: बढ़ती जाती है। प्रायद्वीपीय भारत के पश्चिमी तट का उत्तरी भाग रिया तट का अच्छा उदाहरण है।

(c) डॉल्मेशियन तट : समानान्तर पर्वतीय कटकों वाले तटों के धँसाव से डॉल्मेशियन तट का निर्माण होता है। यूगोस्लाविया का डॉल्मेशियन तट इसका सर्वोत्तम उदाहरण है।

(d) हैफा तट या निमग्न निम्नभूमि का तट: सागरीय तटीय भाग में किसी निम्न भूमि के डूब जाने से निर्मित तट को निमग्न निम्न भूमि का तट कहते हैं। यह तट कटा-फटा नहीं होता तथा इस पर घाटियों का अभाव पाया जाता है। इस पर रोधिकाओं की समानान्तर श्रृंखला मिलती है जिससे

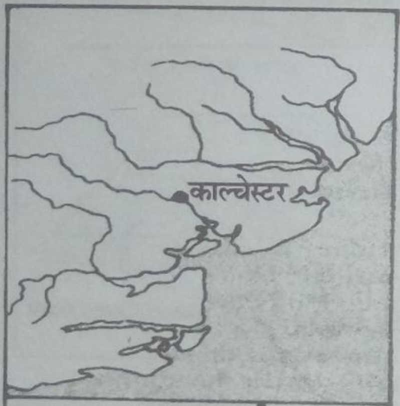

ज्वारनदमुखी

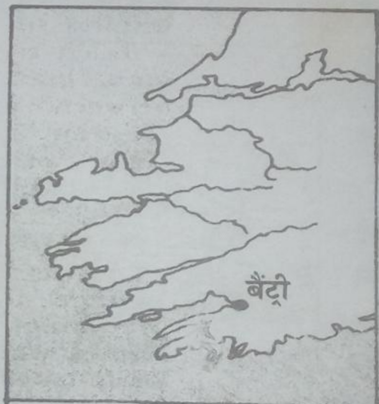

रिया

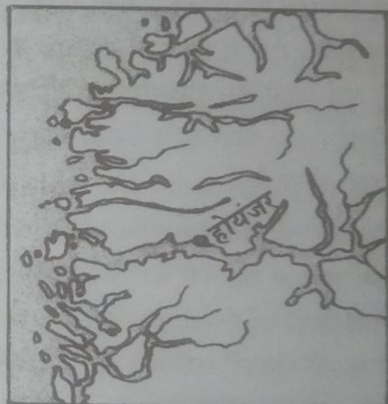

फियर्ड

डाल्मेशियन

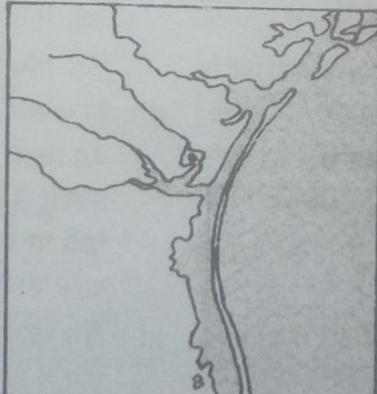
लैगून

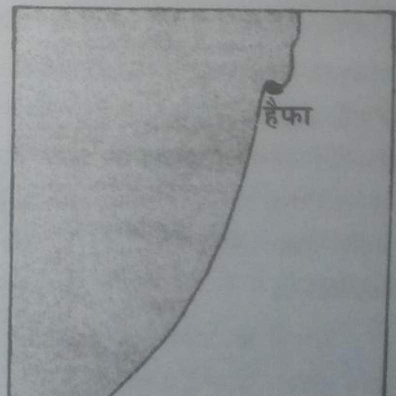

निक्षेपण

सागरीय जल घिरकर लैगून झीलों का निर्माण करता है। यूरोप का बाल्टिक तट हैफा तट का अच्छा उदाहरण है।

(e) **निर्गत समुद्र तट** : स्थलखंड के ऊपर उठने या समुद्री जलस्तर के नीचे गिरने से निर्गत समुद्र तट का निर्माण होता है। इस प्रकार के तट पर स्पिट, लैगून, पुलिन, क्लिफ तथा मेहराब मिलते हैं। भारत में गुजरात का काठियावाड़ तट निर्गत समुद्र तट का अच्छा उदाहरण है।

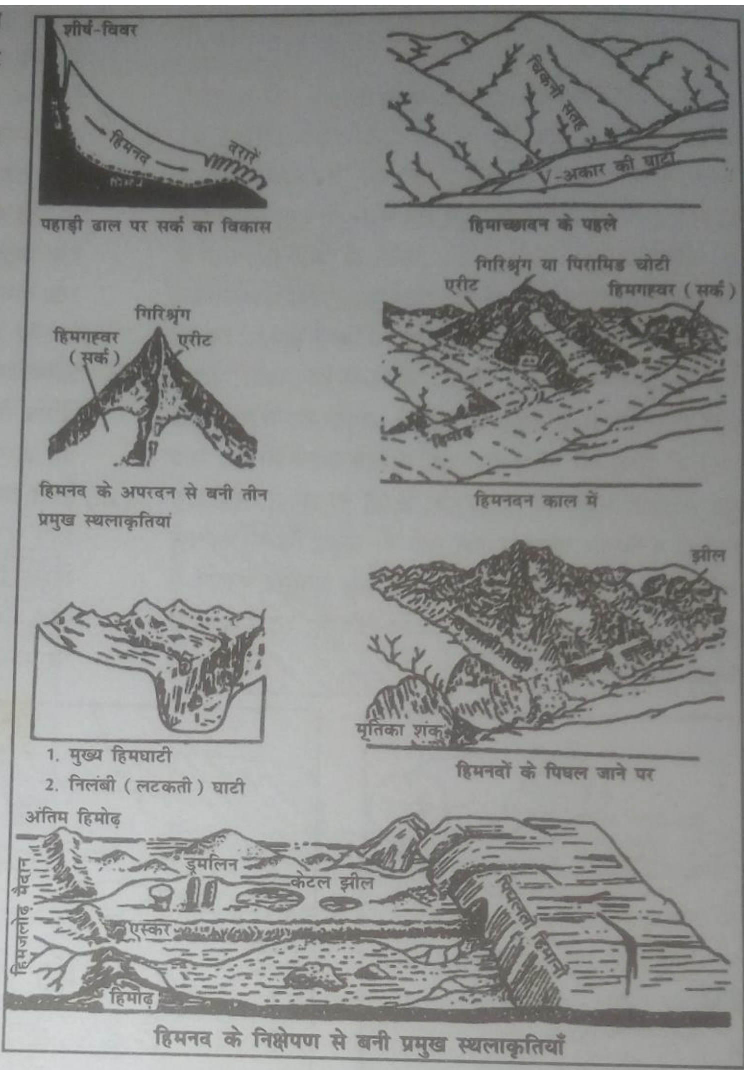

पहाड़ी ढाल पर सर्क का विकास

हिमाच्छादन के पहले

हिमनद के अपरदन से बनी तीन प्रमुख स्थलाकृतियां

हिमनदन काल में

1. मुख्य हिमघाटी
2. निलंबी (लटकती) घाटी

हिमनदों के पिघल जाने पर

हिमनद के निक्षेपण से बनी प्रमुख स्थलाकृतियाँ

हिमानी (Glaciers)

पर्वतीय तथा ध्रुवीय क्षेत्रों की वह रेखा जिसके ऊपर वर्षभर हिम का आवरण रहता है तथा बर्फ पूर्णतया कभी नहीं पिघलती, हिमरेखा कहलाती है। हिमरेखा में ऋतु के अनुरूप परिवर्तन भी देखे जाते हैं। भूमध्यरेखा से ध्रुवों की ओर जाने पर हिमरेखा की ऊँचाई क्रमशः घटती जाती है एवं ध्रुवीय क्षेत्रों में यह प्रायः समुद्रतल के बराबर ही पाई जाती है। भूमध्यरेखा पर हिमरेखा की ऊँचाई 6000 मीटर है जबकि हिमालय पर यह 5500 मीटर है।

हिमानी या हिमनद धीमी गति से बहनेवाली हिम या बर्फ की नदी है। ऊँचे पर्वतों में बनने वाली हिमानियाँ लम्बी तथा तंग होती है क्योंकि वे किसी पूर्ववर्ती नदी की घाटी में बनती है। इन्हें घाटी हिमानी (valley Glacier) कहते हैं। भारतीय हिमनदों में सबसे बड़ी काराकोरम श्रेणी में अवस्थित **सियाचिन** हिमनद है जो 72 किमी. लम्बी है। जब हिमावरण आसपास की निम्नभूमि पर फैल जाता है तो वह महाद्वीपीय हिमानी कहलाता है। बर्फ से ढँकी ऊँची पर्वत चोटियाँ, जिससे हिमनद निकलती है, हिमछत्रक (Ice Cap) कहलाती है। पठार पर जमी बर्फ की चट्टानें हिमचादर (Ice Sheet) कहलाती हैं जबकि पानी में तैर रही बर्फ की सिल्ली हिमशैल (Iceberg) कहलाती है।

हिमानी या हिमनद द्वारा धरातलीय उच्चावच में परिवर्तन कार्य मुख्यतः दो रूपों में सम्पन्न होता है- उत्पाटन व अपघर्षण। हिमानी द्वारा निर्मित स्थलरूप निम्न हैं-

i) **'U' आकार की घाटी** : पहाड़ों पर पहले से मौजूद नदी घाटी में हिमानी के लंबवत अपरदन से 'U' आकार की घाटी का निर्माण होता है।

ii) **निलम्बित या लटकती घाटी (Hanging Valley)** : जब किसी मुख्य हिमनद से कोई सहायक हिमनद आकर मिलती है तो सहायक हिमनद की घाटी मुख्य हिमनद घाटी पर लटकती सी प्रतीत होती है जिसे लटकती घाटी कहते हैं।

iii) **हिम गह्वर या सर्क (Cirques)** : जब किसी पर्वतीय भाग से हिमानियाँ हटती हैं तो वहाँ आरामकुर्सी की तरह की आकृति बनती है जिसे सर्क कहते हैं।

iv) **एरीट (Aretes)** : किसी पर्वत के दोनों ओर सर्क के विकसित होने से मध्य का भाग अपरदित होकर नुकीला हो जाता है जिसे एरीट कहते हैं।

v) **गिरि श्रृंग या हॉर्न (Horns)** : जब किसी पर्वतीय भाग पर चारों ओर से सर्क बनने लगते है तो बीच का नुकीला शीर्ष हॉर्न कहलाता है। स्विट्जरलैंड का मैटरहॉर्न विश्व प्रसिद्ध है।

vi) **नुनाटक (Nunataks)** : किसी पर्वतीय भाग में हिमाच्छादन के बावजूद चट्टानों के निकले हुए ऊँचे टीले नुनाटक कहलाते हैं।

vii) **भेड़ शिला (Roche Moutonne)** : हिमानी के मार्ग में जब कोई बड़ी ऊँची चट्टानी आकृति अवरोधक के रूप में आती है तो हिमानी उसके ऊपर से बहने लगती है तथा चढ़ते समय अपघर्षण के कारण इसे मंद व चिकना कर देती है; किंतु विपरीत दिशा की ढाल, जिसपर हिमानी उतरती है, को तोड़-फोड़ कर अधिक तीव्र, उबड़-खाबड़, ढाल बना देती है। ऐसे चट्टानी टीले दूर से देखने पर भेड़ के पीठ के समान दिखते हैं। अत: इन्हें भेड़शिला कहते हैं।

viii) **हिमोढ़ (Moraines)** : हिमानियों द्वारा अपरदित व परिवहित पदार्थों का निक्षेप हिमोढ़ कहलाता है। यह प्राय: उन्हीं स्थानों पर होता है जहाँ हिमानियाँ पिघलकर जल में परिवर्तित होने लगती है।

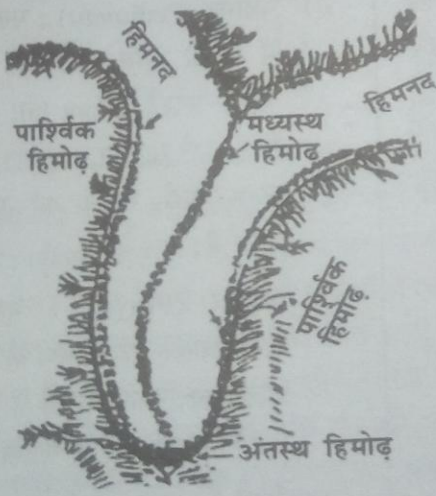

हिमानी में हिमाढ़ों की स्थिति

ix) **ड्रमलिन (Drumlins)** : जब हिमानियों के तलस्थ हिमोढ़ का थोडे-थोड़े समय पर गुंबदाकार टीलों के रूप में जमाव होता है तो उससे बनी स्थलाकृतियों को ड्रमलिन कहा जाता है। इसका आकार उल्टे हुए नौका के समान होता है।

(x) **अपक्षेप मैदान (Outwash Plain)** : हिमानी के पिघलने पर बने हिमजल के प्रवाहित होने से हिमोढ़ एक चादर की भांति काफी बड़े क्षेत्र पर विस्तृत हो जाते हैं। इन्हीं मैदानों को अपक्षेप मैदान कहते हैं। इस मैदान में धाराओं द्वारा निर्मित शिलाखंडों की तहों वाली टेढ़ी-मेढ़ी कगारें एस्कर (Esker) कहलाती है। केम, केटल व हम्मक अवक्षेप मैदान के अन्य प्रमुख स्थल रूप हैं।

- **परिहिमानी:** ये ध्रुवीय व उपध्रुवीय प्रदेशों में सतही हिमानी के द्वारा होता है। इनमें तुषार-अपक्षय (कंजेलीफ्रैक्शन), मृदासर्पण (सोलफ्लक्शन) व मृदाउत्क्षेपण जैसी क्रियाएं देखी जाती हैं। पिंगो, पल्सा, थर्मोकास्ट, हम्मक (गिरिका), तुषार क्लिफ, तुषार बहुभुज व अंतर्वलन इसके द्वारा निर्मित प्रमुख स्थलाकृतियां है। पेल्टियर ने परिहिमानी चक्र का प्रतिपादन किया है।

पवन (Wind)

शुष्क व अर्द्धशुष्क मरूस्थलीय भागों में पवन ही अपरदन का सबसे शक्तिशाली साधन है क्योंकि यहाँ वर्षा नाम मात्र की होती है और आर्द्रता तथा वनस्पति के अभाव में मिट्टी के कण ढीले रहते हैं। यहाँ पवन को यांत्रिक अपक्षय से बहुत मदद मिलती है। ऊँचाई पर पवन द्वारा कटाव कम और भूतल के निकट अधिक होता है क्योंकि बालू के कण अधिक ऊँचे नहीं उठ पाते। इसका अपरदनात्मक कार्य मुख्यत: भौतिक ही होता है जो अपघर्षण, सन्निघर्षण तथा अपवहन के रूप में किया जाता है। पवन द्वारा निर्मित स्थलरूप निम्न हैं-

i) **वात गर्त या अपवाह बेसिन (Blow Out)** : पवन के अपवहन कार्य द्वारा अर्द्धशुष्क मरूस्थलीय क्षेत्रों में धरातल पर बिछी रेत को उड़ाए जाने के कारण छोटे-छोटे गर्तों का निर्माण हो जाता है, जो क्रमश: बढ़कर बड़ा आकार धारण कर लेते हैं। इन्हीं गर्तों को वात गर्त कहा जाता है।

ii) **छत्रक शैल या गारा (Mushroom Rock or Gara)** : यह पवन के अपघर्षण से बनी वह स्थलाकृति है जो कुकुरमुत्ते जैसी लगती है। चट्टानों के निचले भागों में अधिक कटाव होने के कारण ऐसी आकृति बनती है।

iii) **ज्यूगेन (Zeugen)** : यह दावातनुमा आकृति है जिसका निर्माण वहाँ होता है जहाँ मुलायम और कड़ी चट्टानों की परतें क्षैतिज अवस्था में होती हैं। चट्टान की दरारों में ओस भरने और रात में तापमान कम होने से मुलायम चट्टानों का अपरदन होने लगता है। कठोर चट्टानी भाग टोपी की भांति नजर आता है। इन्हें ही ज्यूगेन कहते हैं।

iv) **यारडांग (Yardang) :** कड़ी और मुलायम चट्टानों की परतें जब पवन की प्रवाह दिशा में होती है तो कड़ी चट्टानों की अपेक्षा मुलायम चट्टानें अधिक कटने लगती है और वहाँ नालीनुमा गड्ढे बन जाते हैं। इसे ही यारडांग कहा जाता है।

v) **गुंबदाकार टीला या इंसेलबर्ग (Inselburg) :** पवन के प्रभावकारी अपरदन से जब चट्टानी भाग कट-छंटकर समतल हो जाता है और यत्र-तत्र कड़े चट्टान टीले के रूप में उभरे रह जाते हैं तो उन्हें इंसेलबर्ग नाम दिया जाता है।

vi) **ड्राइकांटर (Dreikanter) :** भूमि पर बिछे कठोर चट्टानी टुकड़ों पर बालूयुक्त हवा की चोट पड़ने से उनका आकार घिसकर चिकना व तिकोना हो जाता है। ये तिकोने टुकड़े ही ड्राइकांटर कहलाते हैं।

vii) **जालीवार शिला (Stone Lattice) :** जब तीव्रगति से चलनेवाली पवन के मार्ग में विविधतापूर्ण संरचना वाली चट्टान उपस्थित होती है तो उसके कोमल भागों को काटकर पवन आर-पार प्रवाहित होने लगती है जिससे वह चट्टान जाली के समान दिखाई पड़ने लगता है।

viii) **बालुका स्तूप (Sand Dunes) :** ऐसे टीले जो हवा द्वारा उड़ाकर लायी गयी रेत आदि पदार्थों के जमाव से बनते हैं, बालुका स्तूप कहलाते हैं। ये पवन की दिशा में खिसकते या स्थानान्तरित होते रहते हैं। 'बरखान' अर्द्धचन्द्राकार बालू का टीला होता है जिसके दोनों छोरों पर आगे की ओर नुकीली सींग जैसी आकृति निकली रहती है। लूनेट, ह्वेल बैक स्तूप, तारा स्तूप, सीफ आदि भी बालूका स्तूपों के विभिन्न प्रकार है।

पवन के अपघर्षण से बनी स्थलाकृतियाँ छत्रकशिला या गारा

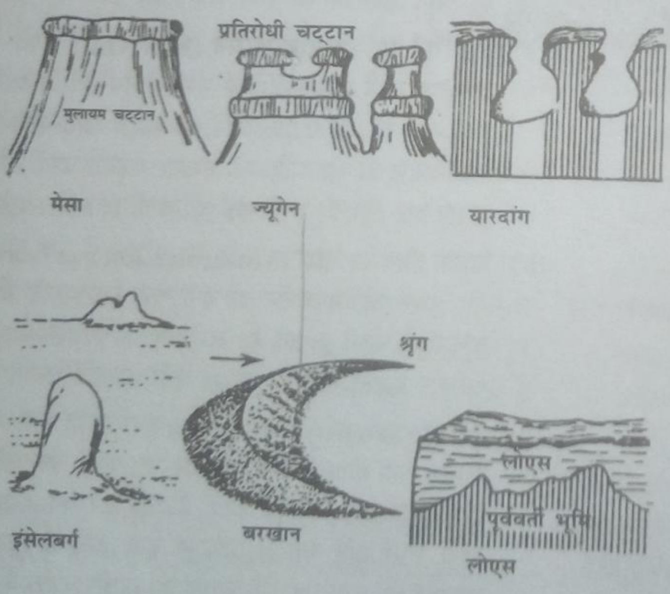

पवन द्वारा निर्मित स्थलाकृतियाँ

ix) **लोएस (Loess) :** मरूस्थलीय क्षेत्रों के बाहर पवन द्वारा उड़ाकर लाए गए महीन बालूकणों के वृहत् निक्षेप को लोएस कहते हैं। इसकी मिट्टी जल मिलने पर अत्यन्त उपजाऊ हो जाती है। चीन के उत्तरी मैदान में लोएस मिट्टी मिलती है जो गोबी मरूस्थल से उड़ाकर लाई गई है। ऑक्सीकरण के कारण इसका रंग पीला होता है।

x) **पेडीमेंट (Pediment) :** मरूस्थलीय प्रदेशों में किसी पर्वत, पठार या इंसेलबर्ग के पदीय प्रदेशों (Foot hill regions) में मिलनेवाले सामान्य ढालयुक्त अपरदित शैल सतह वाले मैदान को पीडमेंट कहा जाता है।

xi) **प्लाया (Playa) :** मरूस्थल की अन्त:प्रवाहित नदियाँ वर्षा के बाद अस्थायी झीलों का निर्माण करती हैं, जिन्हें प्लाया कहते हैं। खारे जल के प्लाया को सैलीनास कहते हैं।

xii) **बजादा या बहादा (Bajada) :** इसका निर्माण पेडीमेंट के नीचे तथा प्लाया के किनारों पर जलोढ़ पंखों के मिलने से होता है।

विषय–भूगोल , बी. ए. प्रथम बर्ष (प्रश्न–पत्र , प्रथम)

चट्टान

पृथ्वी के क्रस्ट में मिलनेवाले सभी प्रकार के मुलायम व कठोर पदार्थ 'चट्टान' कहे जाते हैं। इनका निर्माण विभिन्न प्रकार के खनिजों के सम्मिश्रण से हुआ है। यद्यपि पृथ्वी के क्रस्ट में तत्वों की संख्या 110 है किन्तु उसके लगभग 98% से भी अधिक भाग की संरचना में मात्र 8 प्रमुख चट्टान निर्माणकारी तत्वों का ही योगदान है। ये हैं- ऑक्सीजन (47%), सिलिकन (28%), एल्युमिनियम (8%), लोहा (5%), कैल्शियम, सोडियम, पोटेशियम तथा मैग्नीशियम। यद्यपि क्रस्ट में खनिजों की संख्या 2000 से भी अधिक है किन्तु कुल 24 खनिजों को ही 'चट्टान निर्माता खनिज' की संज्ञा दी जाती है क्योंकि अधिकांश चट्टानों का निर्माण इन्हीं से हुआ है। इनमें से भी मात्र 6 खनिज ही प्रधान रूप से पाए जाते हैं। इन खनिजों में फेल्सपार, क्वार्ट्ज (स्फटिक), पॉयरॉक्सींस, एम्फीबोल्स, अभ्रक तथा ओलीविन उल्लेखनीय हैं। चट्टान निर्माणकारी खनिज वर्गों में सिलिकेट (फेल्सपार, अभ्रक आदि) सर्वप्रमुख है एवं ऑक्साइड (कार्टूज, हेमाटाइट, मैग्नेटाइट आदि) तथा कार्बोनेट (कैल्साइट, डोलोमाइट आदि) का स्थान क्रमशः उसके बाद आता है।

निर्माण विधि के अनुसार चट्टानों के तीन वर्ग किए जा सकते हैं:-

1. **आग्नेय चट्टान (Igneous Rocks)**
2. **अवसादी चट्टान (Sedimentary Rocks)**
3. **रूपान्तरित चट्टान (Metamorphic Rocks)**

आग्नेय चट्टान : इसका निर्माण क्रस्ट के नीचे उपस्थित तप्त एवं तरल मैग्मा के ठंडा होने से होता है। आग्नेय चट्टान रवेदार होते हैं। इसे 'प्राथमिक चट्टान' भी कहते हैं क्योंकि पृथ्वी की उत्पत्ति के पश्चात सर्वप्रथम इनका ही निर्माण हुआ था। अवसादी व रूपान्तरित चट्टान इसी से निर्मित होते हैं। इनमें परतें नहीं होती तथा जीवावशेष (Fossils) भी इनमें नहीं पाए जाते हैं। रासायनिक अपक्षय का इन चट्टानों पर प्रभाव कम पड़ता है किन्तु भौतिक व यांत्रिक अपक्षय का प्रभाव अधिक होता है, परिणामस्वरूप इन चट्टानों में विघटन (Disintegration) और वियोजन (Decomposition) होते हैं। क्रस्ट का लगभग 90% भाग आग्नेय चट्टानों से बना है।

स्थिति एवं संरचना के अनुसार आग्नेय चट्टानें दो प्रकार की हैं-

(क) अन्तः निर्मित आग्नेय चट्टान (Intrusive igneous rock) : जब मैग्मा सतह से नीचे ही ठंडा होकर ठोस रूप धारण कर ले तो आन्तरिक आग्नेय चट्टान का निर्माण होता है। इसके दो उपवर्ग हैं-

(a) पातालीय चट्टान (Plutonic Rock) : इसका निर्माण पृथ्वी के अंदर काफी अधिक गहराई पर होता है। इसका नामकरण 'प्लूटो' (यूनानी देवता) के नाम पर किया गया है जो पाताली देवता माने जाते हैं। अत्यधिक धीमी गति से ठंडा होने के कारण इसके रवे बड़े-बड़े होते हैं। 'ग्रेनाइट' चट्टान इसी का उदाहरण है।

(b) मध्यवर्ती चट्टानें (Hypobyssal Rock) : ज्वालामुखी उद्गार के समय धरातलीय अवरोध के कारण मैग्मा दरारों, छिद्रों एवं नली में ही जमकर ठोस रूप धारण कर लेता है। कालान्तर में अपरदन की क्रिया के उपरान्त ये चट्टानें धरातल पर नजर आने लगती है। डोलेराइट और मेग्नेटाइट इन चट्टानों के महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं। इसके मुख्य रूप हैं- लैकोलिथ, फैकोलिथ, लोपोलिथ, बेथोलिथ, सिल, डाइक आदि।

(ख) बाह्य आग्नेय चट्टान (Extrusive igneous rock) : कभी-कभी मैग्मा भूपर्पटी के ऊपर आ जाता है तो तेजी से ठंडा होकर ठोस रूप धारण कर लेता है और बाह्य चट्टान का निर्माण करता है। इसे 'ज्वालामुखी चट्टान' भी कहते हैं। इन चट्टानों के रवे बहुत छोटे होते हैं। बैसाल्ट इसका अच्छा उदाहरण है। इस चट्टान के क्षरण से ही काली मिट्टी का निर्माण होता है जिसे 'रेगड़' (Regur) कहते हैं। रंध्रविहीन ग्लासी मैग्मा के अंतर्गत ऑब्सीडियन, प्यूमिस, परलाइट व पिच स्टोन आते हैं।

अवसादी चट्टान : पृथ्वी तल पर आग्नेय व रूपान्तरित चट्टानों के अपरदन व निक्षेपण के फलस्वरूप निर्मित चट्टानों को 'अवसादी चट्टान' कहते हैं। इन पुनर्निर्मित चट्टानों में परतों का विकास होने के कारण इन्हें 'प्रस्तरित या परतदार चट्टान' भी कहा जाता है। इनके निर्माण में जैविक अवशेषों का भी योगदान होता है। सम्पूर्ण क्रस्ट के लगभग 75% भाग

पर अवसादी चट्टान विस्तृत है पर क्रस्ट के निर्माण में इसका योगदान मात्र 5% है।

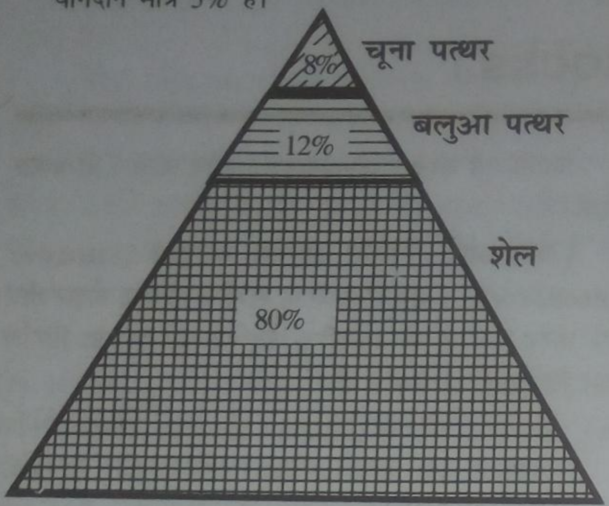

अवसादी शैलों का संघटन

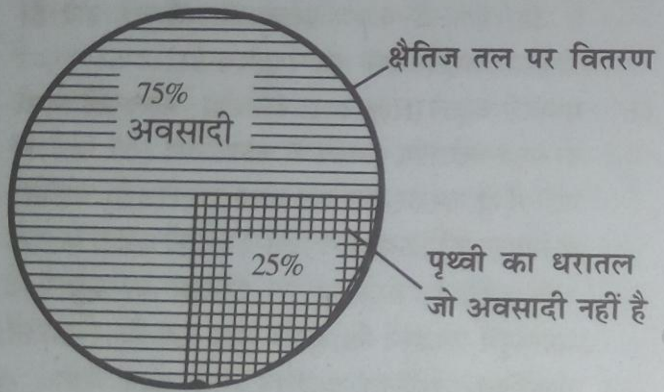

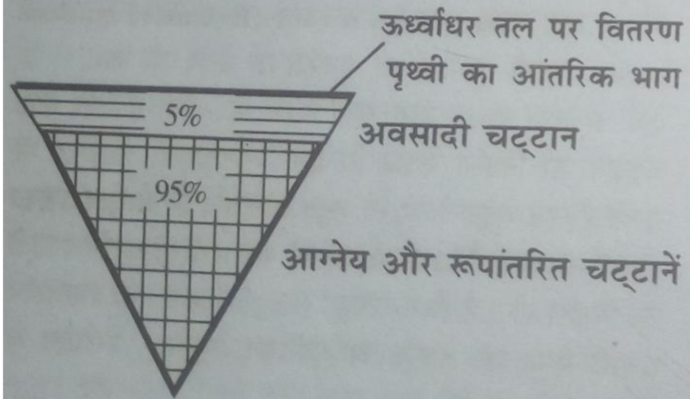

निर्माण में भाग लेनेवाले अवसादों के आधार पर अवसादी चट्टानों को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है–

(क) यांत्रिक क्रियाओं द्वारा निर्मित अवसादी चट्टान, जैसे- बालुका पत्थर (Sand stone), कांग्लोमेरेट या गोलाश्म (Conglomerate), चीका मिट्टी (clay), शेल (Shale) तथा लोएस (Loess) आदि।

(ख) जैविक तत्वों से निर्मित अवसादी चट्टान, जैसे-चूना पत्थर (Lime stone), कोयला (Coal) तथा पीट (Peat) आदि।

(ग) रासायनिक तत्वों से निर्मित अवसादी चट्टान जैसे-खड़िया मिट्टी (Chalk), सेलखड़ी (Gypsum) तथा नमक की चट्टान (Salt Rock)।

3. रूपान्तरित चट्टान : ताप एवं दबाव के कारण आग्नेय तथा अवसादी चट्टानों के संगठन तथा स्वरूप में परिवर्तन या रूपान्तरण हो जाता है। इसे 'रूपान्तरित चट्टान' कहते हैं। यह सर्वाधिक कठोर चट्टान है तथा इसमें जीवाश्म नहीं मिलते।

अवसादी चट्टानों के रुपान्तरण से बनी शैलें–

(i)	शैल	–	स्लेट
(ii)	चूना पत्थर	–	संगमरमर
(iii)	चॉक एवं डोलोमाइट	–	संगमरमर
(iv)	बालुका पत्थर	–	क्वार्टजाइट
(v)	कांग्लोमेरेट	–	क्वार्टजाइट

आग्नेय चट्टानों के रूपान्तरण से बनी शैलें–

(i)	ग्रेनाइट	–	नीस
(ii)	बेसाल्ट	–	एम्फीबोलाइट
(iii)	बेसाल्ट	–	सिस्ट

रूपान्तरित चट्टानों के पुनः रूपान्तरण से बनी शैलें–

(i)	स्लेट	–	फाइलाइट
(ii)	फाइलाइट	–	सिस्ट
(iii)	गैब्रो	–	सरपेंटाइन

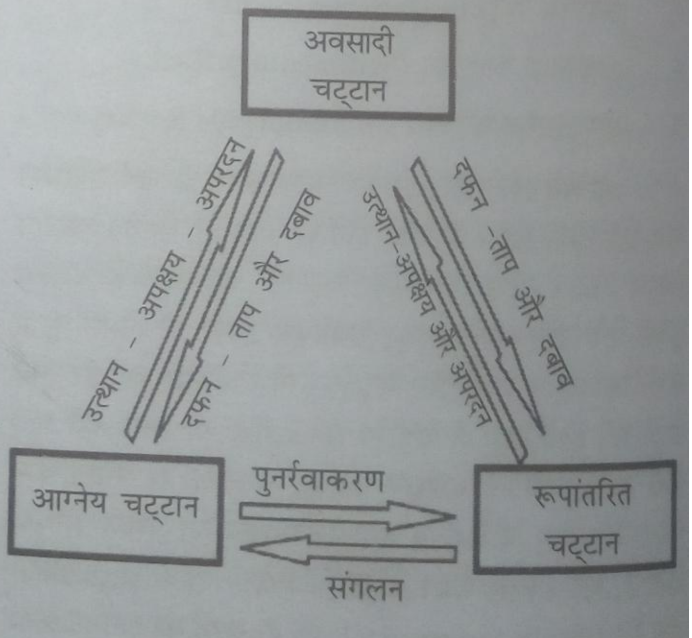

चट्टान चक्र

विषय–भूगोल , बी. ए. प्रथम बर्ष (प्रश्न–पत्र , प्रथम)

ज्वालामुखी

ज्वालामुखी (Volcanos)

ज्वालामुखी वह विवर या छिद्र है जिससे लावा, राख, गैस व जलवाष्प का उद्‌गार होता है। ज्वालामुखी क्रिया के अंतर्गत पृथ्वी के आंतरिक भाग में मैग्मा व गैस के उत्पन्न होने से लेकर भू-पटल के नीचे व ऊपर लावा के प्रकट होने तथा शीतल व ठोस होने की समस्त प्रक्रियाएं शामिल की जाती हैं। लावा का यह उद्‌गार केंद्रीय विस्फोटक के रूप में या दरारी उद्‌भेदन के रूप में हो सकता है। मैग्मा में सिलिका की मात्रा अधिक होने पर ज्वालामुखी में विस्फोटक उद्‌गार देखे जाते हैं जबकि सिलिका की मात्रा कम रहने पर उद्‌गार प्रायः शांत रहता है। वर्तमान समय में मैग्मा तथा लावा एवं आग्नेय शैलों का वर्गीकरण **रासायनिक व खनिज संघटन के आधार पर** किया जाता है। खनिजों को हल्के रंग व गहरे रंग की दो कोटियों में विभक्त किया जाता है। हल्के रंग के खनिजों को फेल्सिक एवं गहरे रंग के खनिजों को मैफिक कहते हैं। 'फेल्सिक' समूह में सिलिका प्रधान खनिज क्वार्ट्ज तथा फेल्सफार प्रमुखता से होते हैं जबकि 'मैफिक' समूह में मैग्नेशियम व लौह तत्व की अधिकता वाले खनिज पायरॉक्सींस, एम्फीबोल्स तथा ऑल्वीन की प्रधानता होती है। फेल्सिक व मैफिक के मध्यस्थ गुणों वाले खनिजों को 'अल्ट्रामैफिक' कहा जाता है। इसमें सिलिकन व अल्युमिनियम की मात्रा अधिक होती है। फेल्सिक, अल्ट्रामैफिक व मैफिक के अंतर्गत ग्रेनाइट, डायोराइट व गैब्रो क्रमशः अंतर्जात लावा के एवं रायोलाइट, एंडेसाइट व बैसाल्ट क्रमशः बहिर्जात लावा के उदाहरण हैं।

ज्वालामुखी लावा के जमाव से निर्मित **आंतरिक स्थलरूपों** में **बैथोलिथ**, किसी भी प्रकार की चट्टानों में मैग्मा का गुम्बदनुमा जमाव है। धीरे-धीरे ठंडा होने के कारण इसके रवे (कणों का आकार) बढ़े होते हैं तथा यह ग्रेनाइट प्रकार का होता है। यह अपेक्षाकृत अधिक गहरे भागों में देखा जाता है। अपेक्षाकृत कम गहराई पर अवसादी चट्टानों में मैग्मा के अलग-अलग प्रकार से ठंडा होने की प्रक्रिया में कई प्रकार के स्थल रूप देखे जाते हैं इनमें **लैकोलिथ** उत्तल ढाल वाला एवं **लोपोलिथ** अवतल बेसिन में लावा जमाव है। **फैकोलिथ** मोड़दार पर्वतों के अभिनतियों व अपनतियों में अभ्यांतरिक लावा जमाव है। इसी प्रकार **सिल** व **डाइक** क्रमशः लावा के क्षैतिज व लम्बवत जमाव है। सिल की पतली परत को **शीट** एवं डाइक के छोटे स्वरूप को **स्टॉक** कहते हैं।

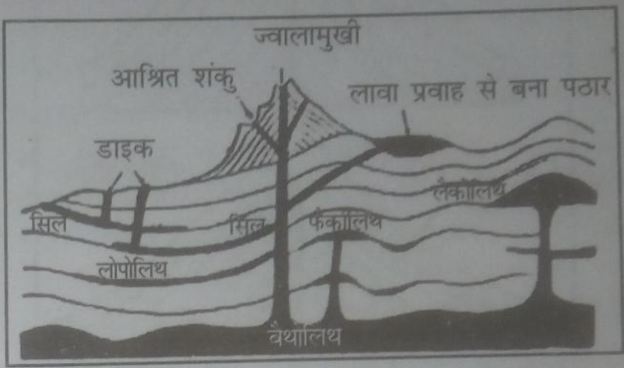

ज्वालामुखी के **विस्फोटक उद्‌गार** से निर्मित होने वाली स्थलाकृतियों में वाह्य भागों में जहां विभिन्न प्रकार के ज्वालामुखी शंकुओं का निर्माण होता है। क्रेटर व काल्डेरा जैसे धंसे हुए स्थलरूप ज्वालामुखी शंकुओं के ऊपर बनते हैं। ज्वालामुखी लावा के **उद्‌गार की घटती तीव्रता** के आधार पर ज्वालामुखी शंकुओं को पीलियन तुल्य, वल्कैनो तुल्य, स्ट्राम्बोली तुल्य व हवाईयन तुल्य प्रकारों में बांटा जाता है। इनमें **पीलियन तुल्य** ज्वालामुखी सबसे अधिक विनाशकारी होते हैं। सिलिका की अधिक मात्रा के कारण मैगमा अत्यधिक अम्लीय व चिपचिपा होता है। इसमें प्रत्येक अगला उद्‌गार पिछले उद्‌गार से निर्मित ज्वालामुखी शंकु को प्रायः तोड़ते हुए होता है। उदाहरण के लिए मार्टीनिक द्वीप में माउंट पीली, सुमात्रा व जावा के निकट क्राकाटाओ तथा फिलीपींस में माउंट ताल। **वल्कैनो** तुल्य ज्वालामुखी में अम्लीय से लेकर क्षारीय तक प्रत्येक प्रकार के मैग्मा का उद्‌गार होता है। गैसों के अत्यधिक निष्कासन के कारण प्रायः फूलगोभी के आकार में ज्वालामुखी मेघ दूर तक छा जाते हैं। विसुवियस प्रकार (प्लिनियन प्रकार) के ज्वालामुखी उद्‌गार को भी इसी वर्ग में रखा जाता है। **स्ट्राम्बोली तुल्य** ज्वालामुखी में अम्ल की मात्रा कुछ कम रहती है तथा यदि गैसों के प्रवाह मार्ग में यदि रुकावट न हो तो सामान्यतः इसमें विस्फोटक उद्‌गार नहीं होते। **हवाईयन** तुल्य ज्वालामुखी का उद्‌गार अत्यंत शांत होता है, क्योंकि लावा तरल व क्षारीय होता है जिससे यह दूर तक फैलकर जमा हो जाता है। ज्वालामुखी शंकु कम ऊंचाई का व दूर तक फैला हुआ होता है।

ज्वालामुखी के विस्फोटक उद्‌गार से निर्मित ज्वालामुखी शंकुओं की आकृतियों में पर्याप्त भिन्नता देखी जाती है।

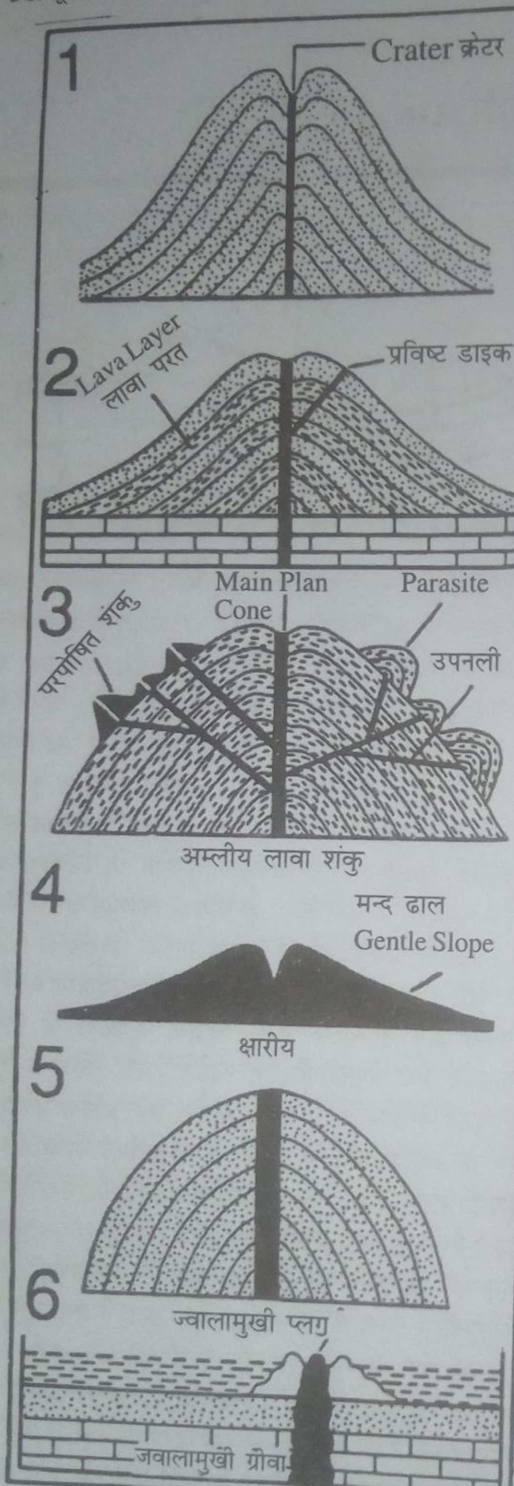

1. सिंडर शंकु, 2. मिश्रित या कम्पोजिट शंकु, 3. परिपोषित शंकु, 4. पैठिक लावा शंकु, 5. एसिड लावा शंकु, 6. ज्वालामुखी प्लग।

1. **सिंडर या राख शंकुः** इस प्रकार के शंकु प्रायः कम ऊंचाई के होते हैं एवं इनके निर्माण में मुख्यतः ज्वालामुखी राख व विखंडित पदार्थों का योगदान रहता है। तरल पदार्थों का योगदान प्रायः नहीं होता है। इस तरह के शंकु का ढाल अवतल होता है तथा क्रेटर अधिक चौड़ा रहता है। उदाहरण के लिए मेक्सिको का जोरल्लो पर्वत, सान-सल्वाडोर में इजाल्को पर्वत, फिलीपींस के लुजोन द्वीप में कैमेग्विन पर्वत, मैक्सिको में पैराक्युटिन पर्वत, ग्वोटमाला में वल्केनो डि-फ्यूगो पर्वत।

2. **लावा शंकुः** इस प्रकार के शंकु के निर्माण में अम्लीय से लेकर क्षारीय तक किसी भी प्रकार के तरल मैग्मा के उद्गार की भूमिका होती है। लावा शंकु को पुनः अम्लीय या क्षारीय प्रकार में बांटा जा सकता है।

(i) **अम्लीय लावा शंकुः** इस प्रकार के शंकु का निर्माण उस समय होता है जब ज्वालामुखी लावा में सिलिका की मात्रा अधिक हो जिससे वह अधिक चिपचिपा व लसदार हो जाता है तथा तीव्र विस्फोटक उद्गार के साथ भूपटल के बाहर प्रकट होता है। ऐसा ज्वालामुखी शंकु अधिक ऊंचाई व कम क्षेत्रीय विस्तार वाला होता है। इसी वर्ग में पीलियन तुल्य, वल्केनो तुल्य व स्ट्राम्बोली तुल्य ज्वालामुखियों को रखा जा सकता है।

(ii) **क्षारीय या पैठिक लावा शंकुः** जब ज्वालामुखी लावा क्षारीय हो अर्थात् उसमें सिलिका की मात्रा कम हो तो वह हल्का व पतला हो जाता है तथा दूर तक फैलकर ठंडा होता है जिससे कम ऊंचाई व अधिक क्षेत्रीय विस्तार लिए हुए ज्वालामुखी शंकु का निर्माण होता है। हवाईयन प्रकार के ज्वालामुखी को इस वर्ग में रखा जाता है, जैसे- हवाई द्वीप का मोनालोआ ज्वालामुखी। क्षारीय लावा शंकु को 'शील्ड शंकु' भी कहा जाता है।

3. **मिश्रित ज्वालामुखी शंकुः** जब ज्वालामुखी के केन्द्रीय उद्गार से अम्लीय से लेकर क्षारीय हर प्रकार के लावा का उद्गार हो तथा साथ ही सिंडर व राख भी ज्वालामुखी उद्गार में शामिल हो तो अत्यधिक विस्तृत सुडौल व ऊंचे ज्वालामुखी शंकु का निर्माण हो जाता है। इसमें तरल लावा सिंडर या विखंडित पदार्थों के संयोजक का कार्य करता है। जापान का फ्यूजीयामा, फिलीपींस का मेयान, सं. रा.अमेरिका का रेनियर, हुड, शस्ता आदि मिश्रित प्रकार के ज्वालामुखियों के उदाहरण हैं।

4. **परिपोषित या आश्रित शंकुः** जब ज्वालामुखी का विस्तार अधिक हो जाता है तो उनकी मुख्य नालिका से कभी-कभी फटन के कारण उप-नालिकाएं या शाखाएं निकल जाती हैं। इससे ज्वालामुखी शंकु के ढाल पर एक अन्य

ज्वालामुखी शंकु निर्मित हो जाता है। इसे ही परिपोषित शंकु कहा जाता है। सं. रा. अमेरिका में माउंट शस्तिना, माउंट शस्ता का ही एक परिपोषित शंकु है।

- **लावा डॉट, ज्वालामुखी ग्रीवा व डायट्रेम**

इस प्रकार के स्थलरूप उस समय निर्मित होते हैं जब ज्वालामुखी उद्गार से निकलने वाला लावा अत्यधिक अम्लीय व सिलिकायुक्त हो, तो इस तरह की स्थिति में लावा की एक कठोर पट्टी ज्वालामुखी नालिका एवं विवर (क्रेटर) में जमा हो जाती है। यदि ज्वालामुखी शंकु का विवर ज्वालामुखी लावा से भर जाए तो इसे 'ज्वालामुखी प्लग' या 'लावा डॉट' कहा जाता है। नालिका में जमा हुई लावा पट्टी 'ज्वालामुखी ग्रीवा' कहलाती है। इन दोनों स्थलों को समेकित रूप में 'डायट्रेम' कहा जाता है। सं.रा.अमेरिका के न्यू मेक्सिको में 'शिप रॉक' डायट्रेम का उदाहरण है जबकि इसी प्रांत में 'ब्लैक हिल्स' व 'डेविल टावर' ज्वालामुखी ग्रीवा के उदाहरण हैं। ये सभी स्थल रूप ज्वालामुखी के शांत होने के क्रम में निर्मित होते हैं।

ज्वालामुखी के विस्फोटक उद्गार से शंकु के ऊपर कीपाकार गर्त धंसे हुए भाग के उदाहरण हैं। ये कई प्रकार के हो सकते हैं:

(a) **क्रेटर:** यह ज्वालामुखी शंकु के ऊपर सामान्यतः मिलने वाले कीपाकार गर्तनुमा आकृति है। इसमें यदि जल का भराव हो जाए तो क्रेटर झील बन जाती है, जैसे- महाराष्ट्र के बुलढाना जिले में लोनार झील। कभी-कभी एक मुख्य क्रेटर में कई छोटे-छोटे क्रेटरों का निर्माण हो जाता है। ऐसा उस समय होता है जबकि अगला उद्गार पिछले उद्गार की तुलना में कम तीव्रता का हो। इस तरह के क्रेटर को घोंसलादार क्रेटर (Nested Crator) कहते हैं। उदाहरण के लिए फिलीपींस के माउंट ताल में तीन छोटे क्रेटर मिलते हैं।

(b) **काल्डेरा:** यह क्रेटर का ही अधिक विस्तृत रूप है। यह क्रेटर में धंसाव अथवा विस्फोटक उद्गार से निर्मित स्थलरूप माना जाता है। इनमें से प्रथम मत का प्रतिपादन सं.रा.अमेरिका के भू-गार्भिक सर्वेक्षण विभाग ने किया है। उनके अनुसार क्रेटर के धंसाव से उसका आकार बढ़ा हो जाता है व काल्डेरा निर्मित होते हैं। इस संदर्भ में वे जापान के 'आसो' क्रेटर, सं. रा.अमेरिका का 'क्रेटर लेक' एवं हवाई द्वीप के काल्डेरा का उदाहरण देते हैं।

डेली महोदय ने धंसाव से निर्मित बड़े क्रेटर को ज्वालामुखी गर्त का नाम दिया है। उनके अनुसार जब क्रेटर में पुनः भयंकर विस्फोट होता है तो शंकु के विखंडित पदार्थ दूर-दूर तक फैल जाते हैं तो शंकु के विखंडित पदार्थ दूर-दूर तक फैल जाते हैं व क्रेटर का आकार बड़ा हो जाता है जिसे काल्डेरा कहते हैं। इसीलिए सामान्य रूप से जहां ऐसी आकृति मिलती है वहां से सैकड़ों किमी. की दूरी तक उसके विखंडित पदार्थ मिलते हैं। क्राकाटाओ, विसुवियस व अलास्का के कटमई पर्वत क्षेत्र में ऐसा देखा जाता है। द्वितीय मत को अधिक समर्थन प्राप्त है। अत्यधिक विस्तृत काल्डेरा को 'सुपर काल्डेरा' कहा जाता है। इण्डोनेशिया के सुमात्रा द्वीप के उत्तर पश्चिम में लेक टोवा इसका उदाहरण है।

- ज्वालामुखी के **दरारी उद्भेदन** से लावा पठार व लावा मैदान निर्मित होते हैं। धुंआरे व गीजर भी ज्वालामुखी क्रियाओं से ही संबंधित हैं। ज्वालामुखी के दरारी उद्भेदन से बैसाल्टिक भाग शान्त रूप से प्रवाहित होकर धरातल के ऊपर मोटी परत के रूप में जमा हो जाता है। इन परतों को लावा पठार या ट्रैप कहते हैं। इसका सबसे अच्छा उदाहरण भारत का 'दक्कन ट्रैप' है। सं.रा.अमेरिका का कोलम्बिया-स्नैक पठार, ब्राजील का पराना पठार, दक्षिण अफ्रीका का ड्रैकेन्सबर्ग पठार तथा ग्वाटेमाला का वलकैनो-डि-फ्यूगो इसके कुछ अन्य उदाहरण हैं।
- **उष्णोत्स** या **गीजर** (Gyser) गर्म जल के ऐसे स्रोत हैं जहाँ से समय-समय पर गर्म जल की फुहारें निकलती रहती हैं। गर्म जल के झरनों से यह भिन्न है क्योंकि इसका ज्वालामुखी क्रिया से अनिवार्य संबंध होता है। गीजर का सबसे अच्छा उदाहरण सं. रा.अमेरिका के येलोस्टोन नेशनल पार्क में ओल्ड फेथफुल गीजर व एक्सेल्सियर गीजर है। आइसलैंड का ग्रांड गीजर भी विख्यात है।
- **धुआँरे** (Fumaroles) ज्वालामुखी क्रिया के अंतिम अवस्था के प्रतीक हैं। इनसे गैस व जलवाष्प निकला करते हैं। गंधक युक्त धुआरों को सोलफतारा कहा जाता है। अलास्का (सं.रा. अमेरिका) के कटमई पर्वत को 'हजारों धुआँरों की घाटी' (A valley of ten thousand smokes) कहा जाता है। ईरान का कोह सुल्तान धुआँरा तथा न्यूजीलैंड की प्लेन्टी खाड़ी में स्थित ह्वाइट द्वीप का धुआँरा भी प्रसिद्ध है।

सक्रियता के आधार पर ज्वालामुखियों का निम्न प्रकार से वर्गीकरण किया जाता है:-

1. **सक्रिय (Active) ज्वालामुखी :** वैसे ज्वालामुखी जिनसे लावा, गैस तथा विखण्डित पदार्थ सदैव निकला करते हैं। वर्तमान समय में उनकी संख्या लगभग 500 है। इनमें सिसली के उत्तर में लिपारी द्वीप का स्ट्रॉम्बोली (भूमध्यसागर का प्रकाश स्तंभ), इटली का एटना, इक्वेडोर का कोटोपैक्सी (विश्व का सबसे ऊँचा सक्रिय ज्वालामुखी), अंटार्कटिका का एकमात्र सक्रिय ज्वालामुखी माउंट एर्कश तथा अंडमान-निकोबार के बैरेन द्वीप में सक्रिय ज्वालामुखी प्रमुख हैं।

2. सुषुप्त (Dormant) ज्वालामुखी : अर्थात् वैसे ज्वालामुखी जो वर्षों से सक्रिय नहीं है पर कभी भी विस्फोट कर सकते हैं। इनमें इटली का विसुवियस, जापान का फ्यूजीयामा, इंडोनेशिया का क्राकाताओ तथा अंडमान-निकोबार के नारकोंडम द्वीप (दिसंबर 2004 के सुनामी के बाद अब इसमें सक्रियता के लक्षण दिखाई पड़े हैं) के ज्वालामुखी उल्लेखनीय है।

3. मृत (Dead or Extinct) ज्वालामुखी : इसके अंतर्गत वैसे ज्वालामुखी शामिल किए जाते हैं जिनमें हजारों वर्षों से कोई उद्भेदन नहीं हुआ है तथा भविष्य में भी इसकी कोई संभावना नहीं है। अफ्रीका के पूर्वी भाग में स्थित केनिया व किलिमंजारो, इक्वेडोर का चिम्बाराजो, म्यांमार का पोपा, ईरान का देमबन्द व कोहसुल्तान और एंडीज पर्वतश्रेणी का एकांकागुआ इसके प्रमुख उदाहरण हैं।

विश्व के कुछ प्रमुख ज्वालामुखी

नाम	देश
आजोसडेल सेलेडो	अर्जेंटीना-चिली
कोटोपैक्सी	इक्वेडोर
पोपोकैटेपिटल	मैक्सिको
मोनालोआ	हवाईद्वीप
माउंट कैमरून	कैमरून (अफ्रीका)
माउंट इरेबस	रॉस (अंटार्कटिका)
माउंट एटना	सिसली (इटली)
माउंट पीली	मार्टिनीक द्वीप
हेक्ला व लाकी	आइसलैंड
विसुवियस	नेपल्स की खाड़ी (इटली)
स्ट्रॉम्बोली	लिपारी द्वीप (भूमध्यसागर)
क्राकाटाओ	इंडोनेशिया
कटमई	अलास्का (U.S.A.)
माउंट रेनियर	U.S.A.
माउंट शस्ता	U.S.A.
चिम्बारेजो	इक्वेडोर
फ्यूजीयामा	जापान
माउंट ताल	फिलीपींस
माउंट पिनाटुबो	फिलीपींस
देमबंद	ईरान
कोहसुल्तान	ईरान
माउंट पोपा	म्यांमार (बर्मा)
किलिमंजारो	तंजानिया
मेयाना	फिलीपींस

ज्वालामुखी का विश्व वितरण : प्लेट विवर्तनिकी के आधार पर ज्वालामुखी क्षेत्रों की व्याख्या वर्तमान में सबसे मान्य संकल्पना है। इसके अनुसार 80% ज्वालामुखी विनाशात्मक प्लेट किनारों पर, 15% रचनात्मक प्लेट किनारों पर तथा शेष प्लेट के आन्तरिक भागों में पाए जाते हैं।

ज्वालामुखियों का मेखलाबद्ध वितरण इस प्रकार है-

1. परिप्रशान्त महासागरीय मेखला (Circum Pacific Belt) : यहाँ विनाशात्मक प्लेट किनारों के सहारे ज्वालामुखी मिलते हैं। विश्व के ज्वालामुखियों का लगभग 2/3 भाग प्रशान्त महासागर के दोनों तटीय भागों, द्वीप चापों तथा समुद्री द्वीपों के सहारे पाया जाता है। इसे 'प्रशान्त महासागर का अग्निवलय' (Fire ring of the Pacific Ocean) कहते है। यह पेटी अंटार्कटिका के माउन्ट इरेबस से शुरू होकर दक्षिण अमेरिका के एंडीज पर्वतमाला व उत्तर अमेरिका के रॉकी पर्वतमाला का अनुसरण करते हुए अलास्का, पूर्वी रूस, जापान, फिलीपींस आदि द्वीपों से होते हुए 'मध्य महाद्वीपीय पेटी' में मिल जाती है।

2. मध्य महाद्वीपीय पेटी (Mid-continental Belt) : इस मेखला के अधिकांश ज्वालामुखी विनाशात्मक प्लेट किनारों के सहारे मिलते हैं क्योंकि यहाँ यूरेशियन प्लेट तथा अफ्रीकन व इंडियन प्लेट का अभिसरण होता है। इसकी एक शाखा अफ्रीका की भू-भ्रंश घाटी एवं दूसरी शाखा स्पेन व इटली होते हुए काकेशस व हिमालय की ओर आगे बढ़ते हुए दक्षिण की ओर मुड़कर प्रशांत महासागरीय पेटी से मिल जाती है। यह मेखला मुख्य रूप से अल्पाइन-हिमालय पर्वत श्रृंखला के साथ चलती है। भूमध्यसागर के ज्वालामुखी भी इसी पेटी के अन्तर्गत आते हैं। स्ट्रॉम्बोली, विसुवियस व एटना भूमध्यसागर के प्रसिद्ध ज्वालामुखी हैं। इसी पेटी में ईरान का देमबन्द, कोह सुल्तान, आर्मेनिया का अरारात ज्वालामुखी भी शामिल हैं। यूरोप के अधिकांश ज्वालामुखी इस पेटी में मीडियन मास एवं अफ्रीका के ज्वालामुखी भू-भ्रंश घाटियों के सहारे मिलते हैं। पश्चिम अफ्रीका का एकमात्र जागृत ज्वालामुखी कैमरून पर्वत है।

3. मध्य अटलांटिक मेखला या मध्य महासागरीय कटक: ये रचनात्मक प्लेट किनारों के सहारे मिलते हैं जहाँ-जहाँ पर दो प्लेटों के अपसरण के कारण भ्रंश का निर्माण होता है एवं क्रस्ट के नीचे एस्थेनोस्फेयर से पेरिडोटाइट तथा बैसाल्टिक मैग्मा ऊपर उठते हैं। इनके शीतलन से नवीन क्रस्ट का निर्माण होता

रहता है। कटक के पास नवीनतम लावा होता है एवं कटक से बढ़ती दूरी के साथ लावा भी प्राचीन होता जाता है। हेकला व लॉकी इस प्रदेश में आइसलैंड के प्रमुख ज्वालामुखी है। एंटलीज दक्षिणी अटलांटिक महासागर के एवं एजोर्स व सेंट हेलेना उत्तरी अटलांटिक महासागर के प्रमुख ज्वालामुखी है।

4. **अन्तरा-प्लेटीय ज्वालामुखी :** महासागरीय या महाद्वीपीय प्लेट के आंतरिक भागों में भी ज्वालामुखी क्रियाएँ देखी गई हैं जिन्हें माइक्रो प्लेट गतिविधि एवं गर्म स्थल (Hot Plums) की संकल्पना द्वारा समझा जा सकता है। प्लेट विवर्तनिकी सिद्धांत द्वारा इनका स्पष्टीकरण अभी तक नहीं हो सका है। हवाई द्वीप से लेकर कमचटका तक के ज्वालामुखी, पूर्वी अफ्रीका के भू-भ्रंश घाटी के ज्वालामुखी एवं ज्वालामुखी के दरारी उद्भेदन से बने कोलम्बिया-स्नैक पठार, पराना पठार, दक्कन ट्रैप व ड्रैकेन्सबर्ग पठार अंतरा प्लेटीय ज्वालामुखी क्रियाओं के अन्तर्गत शामिल किए जा सकते हैं।